ੴ सतिगुर प्रसादि ॥

गुर गिआन अंजन सचु नेत्री पाइआ ॥
अंतरि चानणु अगिआनु अंधेरु गवाइआ ॥

गुरमति ज्ञान

(धर्म प्रचार कमेटी का मासिक पत्र)

आषाढ़-सावन, संवत् नानकशाही ५४०

जुलाई **2008** वर्ष १ अंक ११

संपादक
सिमरजीत सिंघ
एम. ए, एम. एस. सी.

सहायक संपादक
सुरिंदर सिंघ निमाणा
एम. ए (हिंदी, पंजाबी), बीएड.

चंदा

सालाना (देश)	१० रुपये
आजीवन (देश)	१०० रुपये
सालाना (विदेश)	२५० रुपये
प्रति कापी	३ रुपये

चंदा भेजने का पता
सचिव
धर्म प्रचार कमेटी
(शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी)
श्री अमृतसर-१४३००६

फोन : 0183-2553956-57-58-59

एक्सटेंशन नंबर { वितरण विभाग **303**, संपादकीय विभाग **304**

फैक्स : 0183-2553919

e-mail : gyan_gurmat@yahoo.com

website : www.sgpc.net

विषय सूची

गुरबाणी विचार

सावणि सरस मना . . .

सावणि सरस मना घण वरसहि रुति आए ॥
मै मनि तनि सहु भावै पिर परदेसि सिधाए ॥
पिरु घरि नही आवै मरीऐ हावै दामनि चमकि डराए ॥
सेज इकेली खरी दुहेली मरणु भइआ दुखु माए ॥
हरि बिनु नीद भूख कहु कैसी कापड़ु तनि न सुखावए ॥
नानक सा सोहागणि कंती पिर कै अंकि समावए ॥ *(पन्ना ११०८)*

बारहमाहा तुखारी के इस पावन शब्द में पहले पातशाह श्री गुरु नानक देव जी सावन मास की सुहावनी वर्षा ऋतु का सुंदर चित्र प्रस्तुत करते हुए, मनुष्य जीवन रूपी सावन मास जैसी जीवन अवस्था में प्रभु-परमात्मा के साथ जीव-स्त्री के मिलन की लोचा को व्यक्त करते हैं।

जीव-स्त्री की ओर से गुरु जी कथन करते हैं कि सावन मास में ऐ मेरे मन! तेरा विगास, तेरी खुशी स्वाभाविक है। इसमें बादल बरसते हैं। यह ऋतु ही ऐसी है। परंतु फिर अपनी वर्तमान वास्तविक स्थिति का ख्याल करते हुए जीव-स्त्री की मानसिक स्थिति तत्काल परिवर्तित हो जाती है और वह कहती है कि मैं मन और तन से पति-परमात्मा को चाहती हूं। मेरा प्यारा मुझे अच्छा लगता है परंतु वह बेगाने देश को चला गया हुआ है।

जीव-स्त्री की ओर से गुरु जी कथन करते हैं कि जब मेरा पति-परमात्मा मेरे हृदय रूपी घर में नहीं आता तो मैंने हटकोरे तो भरने ही हैं, हटकोरे भरकर मैं मरती जाती हूं अथवा मेरी दशा विवशता वाली है। बादलों द्वारा वर्षा तो की ही जा रही है इसके साथ-साथ आसमानी बिजली भी चमक-चमक कर मुझे भयभीत करती है। मेरी मन रूपी सेज सूनी है। यह बिलकुल दुखदायक है। ऐ मेरी मां! ऐसे में मैं मृत्यु जैसी स्थिति के समक्ष हूं। प्रभु मालिक के बिना न नींद आती है और न ही भूख लगती है अर्थात मेरे जीवन की स्वाभाविक प्राकृतिक प्रक्रिया डगमगा गई है। पति-परमात्मा के बिना सावन मास में सुंदर वस्त्र पहनने की रुचि भी नहीं अथवा पति-परमात्मा पास न होने से अच्छे से अच्छे वस्त्र शरीर को सुखमयी नहीं लगते।

गुरु जी अंतिम पंक्ति में बख्शिश करते हुए फरमान करते हैं कि पति-परमात्मा की भाग्यशाली सोहागिन वही जीव-स्त्री है जो पति परमात्मा के साथ लगी रहती है अथवा उसको हर पल स्मरण करती है।

गुरसिख शहीद भाई मनी सिंघ जी एवं भाई तारू सिंघ जी

सिख इतिहास शहीदियों एवं कुर्बानियों से भरपूर व मालामाल है। भले ही इस बड़े संसार में कुछ अन्य कौमें भी ऐसी हुई हैं जिन्हें विभिन्न दौर में काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा परंतु लंबे समय तक अत्यंत कठिनाइयों भरी विकट परिस्थितियों का सामना करना सिख पंथ कहलवाने वाली गुरु नानक नाम-लेवा सिख कौम के ही हिस्से आया है। जितनी बड़ी कठिनाइयां आईं, जितनी जटिल एवं विकट परिस्थितियां बनीं, सिख कौम उतनी ही अधिक उज्जवल होकर चमकी, उसके रूपाकार में उतना ही अधिक निखार आया। यह स्वाभाविक है कि कोई भी व्यक्ति हो या समुदाय वह कठिनाइयों तथा विकट परिस्थितियों के अभाव में ऊंची मंजिलों को कदापि नहीं पा सकता, परंतु कठिनाइयों और विकट परिस्थितियों में किसी के अस्तित्व के खो जाने का भय भी विद्यमान होता है। गुरु नानक पातशाह की साजी-निवाजी सिख कौम भी बीते कुछ एक काल-खंडों में अपने अस्तित्व को गंभीर खतरे के समक्ष रही है, परंतु गुरु का शुक्राना है कि उसने अपनी साजी-निवाजी सिख कौम पर इतनी कृपा दृष्टि रखी है कि यह कौम कभी भी कठिनाइयों एवं विकट परिस्थितियों में विचलित नहीं हुई। इस कौम का सिखी सिदक सदैव कायम-दायम रहा है। इस कौम की दृढ़ता को कभी आंच नहीं आई। यह कौम हर प्रकार के कठिन से कठिन सूरतेहाल में भी अपने मूल सिद्धांतों से तनिक भी परे नहीं हटी, जरा भी डगमगाई नहीं बल्कि सतिगुरों द्वारा बख्शे गए ऊंचे एवं निर्मल उसूलों-आदर्शों को निभाती रही है। इसी प्रसंग में कौम के अनगिणत गुरसिखों ने समय आने पर अपनी जिंदगियां कुर्बान कर दीं परंतु सिखी उसूलों-आदर्शों की अवहेलना स्वीकार न की। गुरसिखों ने दुनिया को दिखा दिया कि जिंदगी चाहे अमूल्य है परंतु सिखी उसूल-आदर्श उससे भी कहीं अधिक अमूल्य हैं। उसूलों-आदर्शों के साथ गुरु के सिदकी सिख कदापि कोई संधि-समझौता स्वीकार नहीं करते।

सिख इतिहास अपने दृढ़ता भरे सिखी-सिदक के अनगिणत उदाहरणों से भरा हुआ है, जिनमें अट्ठारहवीं सदी के मध्य भाग में शहीद हुई दो गुरसिख शख्सियतों का यहां उल्लेख किया जा रहा है। इनमें प्रथम हैं भाई मनी सिंघ जी और द्वितीय भाई तारू सिंघ जी।

भाई मनी सिंघ जी का समस्त जीवन ही गुरु-घर को समर्पित रहा है। आपको बाल्यावस्था में सिखी भावना वाले माता-पिता द्वारा सातवें सतिगुरु श्री गुरु हरिराय साहिब जी महाराज के समक्ष अर्पण कर दिया गया। फिर आप आठवें सतिगुरु श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब और नवम सतिगुरु श्री गुरु तेग बहादर साहिब जी की सेवा में उपस्थित रहे। आपने गुरु-घर में सेवा-समर्पण का एक आदर्श उदाहरण प्रस्तुत किया। आपका पहला नाम 'मनी राम' या 'मनिआ' था। दशमेश पिता जी के हाथों अमृतपान करने का सौभाग्य पाकर आप भाई मनी सिंघ जी बने। जब सतिगुरों को सन् १७०४ में आनंदपुर साहिब छोड़ना पड़ा तो सतिगुरों की आज्ञा से आपको माता सुंदर कौर जी तथा माता साहिब कौर जी सहित दिल्ली जाने का आदेश मिला और आप जी ने पूर्ण सत्कार एवं सुरक्षा सहित आपातकाल स्थिति में इस जिम्मेदारी को निभाया। माताओं के पास कुछ

समय आप जी ने दिल्ली में ठहराव किया और फिर गुरु-हुक्मानुसार सन् १७०५ में सतिगुरों की हजूरी में श्री दमदमा साहिब पहुंच गए। आपको सतिगुरु जी की पावन निगरानी में श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी का पावन स्वरूप (दमदमी बीड़) लिखने का महासौभाग्य प्राप्त हुआ। उत्तर-गुरु काल में आप गुरु-घर की सेवा में तन-मन से समर्पित रहे।

सन् १७२१ में भाई मनी सिंघ जी को माता सुंदर कौर जी की ओर से श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर का प्रबंध सुधारने के मुख्य उद्देश्य से श्री हरिमंदर साहिब के ग्रंथी बनाकर भेजा गया। आपने माता जी की तथा सिख संगत की आशाओं के अनुरूप इस पवित्र केंद्रीय धर्म स्थान के प्रबंध की कायाकल्प कर दी। आप जी ने बंदई खालसा और तत्त खालसा में एकता कराने में भी स्मरणीय योगदान डाला।

सन् १७१५ से १७३७ का काल विशेष रूप से खालसा पंथ की अत्यंत कड़ी परीक्षा का समय था। यह वह समय था जब सिखों के सिरों के मूल्य रखे गए। खालसा जी द्वारा वक्त के अत्याचारी शासन-प्रशासन के अस्तित्व को मिटाने की बुरी आकांक्षाओं के चलते और इनकी पूर्ति हेतु समस्त ताकत झोंक देने के समक्ष खालसा पंथ ने अपना ठिकाना जंगलों-पहाड़ों तथा मरुस्थलों में बना लिया लेकिन गुरसिखों ने गुरु-बख्शे सिखी सिदक, विश्वास और मानसिक-आत्मिक दृढ़ता तथा चढ़ती कला को बनाए रखा। खालसा पंथ की शक्ति को बढ़ाने के उद्देश्य की पूर्ति हेतु भाई साहिब के मन में संवत् १७९५ तदानुसार सन् १७३८ में दीवाली पर्व श्री दरबार साहिब, श्री अमृसर में एकत्रित होकर मनाने की योजना बनाई। चूंकि समय की हकूमत का शिकंजा बहुत ही सख्त था इसलिए रस्मी अनुमति लेना आवश्यक था।

भाई मनी सिंघ जी को दीवाली पर मेला लगाने की अनुमति मिल गई, लेकिन हकूमत ने इसके बदले में पांच हजार रुपये मांगे। इसको स्वीकार कर लिया गया। भाई मनी सिंघ जी ने दूर-समीप के सभी सिखों को दीवाली पर श्री हरिमंदर साहिब, श्री अमृतसर आने का बुलावा भेज दिया।

हकूमत का मन मैला था। उनके द्वारा दीवाली अवसर पर एकत्रित सिख संगत को सामूहिक रूप में खत्म कर डालने की योजना बना ली गई जिसके बारे में भाई साहिब को समय रहते पता चल गया और आपने तत्काल बुलावे भेजे कि संगत इस बार दीवाली पर न आए, हकूमत का मन मैला है। इस प्रकार हकूमत की सिखों को सामूहिक रूप में समाप्त कर डालने की योजना भाई साहिब की सुचेतनता और तत्काल क्रियाशीलता से साकार न हो सकी। हकूमत इस बात से चिढ़ गई।

भाई साहिब को दीवाली की सिख एकत्रता अथवा दीवाली के मेले का मामला अदा करने के लिए कहा गया। भाई साहिब ने स्पष्ट कह किया कि जब तुमने दीवाली की एकत्रता होने ही नहीं दी तो मामला किसका? क्या हकूमत ने कहा नहीं था कि वह खालसे को मेले पर जुड़ने में बाधा नहीं बनेगी? झूठ का सहारा लेने वाले शासकों-प्रशासकों ने इस उचित तर्क की अनसुनी करके कहा कि या तो मामला अदा करो या फिर मुसलमान हो जाओ। दो ही ढंग तुम्हारे बचाव में हैं। यदि इनमें से तुमने एक बात भी स्वीकार न की तो तुम मृत्यु-दण्ड के भागीदार होगे। आजीवन गुरु-घर में सेवा-समर्पण से जीवन-यापन करने वाले प्रभु-ज्ञान-अनुभव के धारक भाई साहिब मृत्यु से भयभीत होने वाले न थे। आपने हकूमत को स्पष्ट कर दिया कि उसूलों से जिंदगी

अधिक प्रिय नहीं है। तुम जो चाहे करो हमको इससे कोई सरोकार नहीं। हकूमत के न्यायाधीश बने बैठे काजी ने आपका बंद-बंद शरीर से काट कर अलग करने का दण्ड सुनाया। आपने सहज भाव से इस दण्ड को सुना और पूर्णत: अडोल मनोस्थिति में बंद-बंद कटाकर शहीद का महान रुतबा प्राप्त किया।

हमारे दूसरे विचाराधीन शहीद भाई तारू सिंघ जी हैं। अमृतसर जिले के पूहला नामक गांव के रहने वाले भाई तारू सिंघ जी कृषक थे। अपनी ईमानदारी की मेहनत की कमाई का एक बड़ा भाग आप आये-गए गुरसिखों की सेवा में लगाकर सतिगुरों का धन्यवाद करते कि कमाई सफल हो रही है। गुरसिखों के रहने का प्रबंध करके उन्हें प्रसन्नता होती। भाई साहिब अपने घर से प्रशादा तैयार करके जंगलों में डेरा लगाये बैठे सिंघों को भेजते। भाई साहिब के साथ उनके माता जी और बहन भी इस सेवा को समर्पित थे। किसी दोखी ने ईनाम के लोभ में भाई साहिब की शिकायत लाहौर के सूबेदार जकरिया खान के पास कर दी।

भाई तारू सिंघ जी को गिरफ्तार कर लिया गया। उन्हें सिखी छोड़ने और मुसलमान होने के लिए कहा गया और इस संबंध में कई लालच तथा डरावे दिये गए परंतु गुरसिख के डोलने-डगमगाने का सवाल ही नहीं था। आपने सिखी सिदक निभाने के लिए एक गुरसिख का स्वाभाविक प्रण दोहराया। भाई साहिब के केश कत्ल करने की सजा सुनाई गई। भाई साहिब ने मन ही मन सतिगुरु के सम्मुख अरदास विनती की कि हे सतिगुरु! सिखी-सिदक केशों-श्वासों सहित निभाने की हिम्मत बख्शना। भाई साहिब के केश काटने में तुर्क विफल हुए। आपने स्पष्ट कह दिया कि वे केशों का अपमान कदापि स्वीकार नहीं करेंगे। इस पर जालिमों ने भाई साहिब के सिर का खोपर ही केशों सहित उतार दिया। भाई साहिब ने सच्चे समर्पित सिख होने का जीवित प्रमाण प्रस्तुत किया। आप केशों सहित खोपर उतरवाकर, इसको प्रभु-हुक्म मानकर पूर्ण अडोलता व दृढ़ता का प्रकटावा करते रहे। भाई तारू सिंघ जी जालिमों की ऐसी कई हृदयबेधक यातनाएं सहन करते हुए शहीदी को प्राप्त हुए। केशों-श्वासों सहित सिखी निभाकर आपने दिखा दिया कि गुरु का सिख केशों का अपमान हरगिज नहीं सहन कर सकता और इनको गुरु की मोहर मानता है। गुरु की मोहर के लिए सिख बड़ी से बड़ी कीमत अदा कर सकता है।

जो पदचिंन्ह भाई मनी सिंघ जी और भाई तारू सिंघ जी छोड़ गए हैं आज उन पर कदम बढ़ाने की आवश्यकता है। हमें आधुनिक युग में रहते, उठते-बैठते हुए इस गौरवमयी शहीदी परंपरा को अपने सम्मुख रखना चाहिए। हक-सच के लिए आवाज बुलंद करके और केशों का सत्कार पूर्णत: कायम-दायम रखकर ही हम भाई मनी सिंघ जी और भाई तारू सिंघ जी जैसे शहीदों को स्मरण कर सकते हैं। दोनों गुरसिख शहीदों की शहादत हमें पूर्णरूपेण सिखी स्वरूप में जीने को प्रेरित कर रही है।

गुरमति ज्ञान के आगामी विशेषांक

*अगस्त **2008**- श्री गुरु ग्रंथ साहिब की संपादना : आवश्यकता, इतिहास तथा शब्द-गुरु-रूप में महत्व।*

*सितंबर **2008**- श्री गुरु ग्रंथ साहिब के बाणीकार--- गुरु साहिबान, भक्त साहिबान, गुरु-घर के निकटवर्ती गुरसिख तथा भट्ट बाणीकारों सम्बंधी अलग-अलग विवरण।*

*अक्तूबर **2008**- श्री गुरु ग्रंथ साहिब में विश्व-बंधुत्व के तत्व।*

श्री गुरु अमरदास जी की हरिद्वार यात्रा

*-डॉ. जगजीत कौर**

सिख धर्म के तृतीय गुरु श्री गुरु अमरदास जी का प्रकाश ८ ज्येष्ठ सं. १५३६ (संवत् नानकशाही ११) तदानुसार ४ मई १४७९ ई को गांव बासरके, जिला अमृतसर में पिता श्री तेजभान जी और माता सुलक्खणी जी के गृह में हुआ। पिता पेशे से खेती का व्यापार करते, अच्छे समृद्ध थे। माता-पिता धार्मिक विचारों के कट्टर वैष्णव थे और तीर्थ-यात्राओं पर जाते थे। गंगा-स्नान, हरिद्वार की यात्रा उनका प्रत्येक वर्ष का नियम था। इन विचारों का प्रभाव बाल अमरदास जी पर भी पड़ा और गुरु-सेवा में आने से पूर्व वे २० बार हरिद्वार की यात्रा पर आते रहे। हरिद्वार की पहली यात्रा उन्होंने सन् १५२१ ई में की और उसके बाद सन् १५४१ ई. तक वे लगातार हरिद्वार की यात्रा पर आते रहे। इसके बाद एक दिन प्रात: उन्होंने बीबी अमरो जी जो उनके बड़े भाई के घर पर पुत्रवधू बन कर आई थी, के सुरीले कण्ठ से गुरबाणी का मधुर गायन सुना। इस बाणी से वे इतने प्रभावित हुए कि पुत्रवधू से पूछा, "यह मीठी बाणी किस महापुरुष की है?" बीबी जी के यह बताने पर कि "पुत्री! यह पावन बाणी श्री गुरु नानक देव जी महाराज की रची है और इस समय उनकी गद्दी पर पिता श्री गुरु अंगद देव जी खडूर साहिब में द्वितीय गुरु के रूप में विराजमान हैं" वे इतने विस्मादित हुए कि गुरु-दर्शनों के लिए उतावले हो उठे।

बीबी अमरो जी उन्हें अपने साथ खडूर साहिब ले आईं। दर्शन करते ही वे गुरु-चरणों पर ऐसे समर्पित हुए कि सन् १५४१ से १५५२ तक गुरु-चरणों की अथक सेवा अति विनम्र भाव से करते हुए गुरु-पद पर प्रतिष्ठित हुए और निमाणिओं के माण, निआसरिओं के आसरा, निओटिओं की ओट तृतीय गुरु हो प्रकट हुए। इसके बाद वे गुरु नानक पातशाह के धर्म-चिन्तन एवं विचार-प्रणाली का ही प्रचार-प्रसार करते रहे और केवल प्रचार ही नहीं इसे और परिपक्वता भी प्रदान की। प्रचार वे श्री गुरु नानक देव जी और श्री गुरु अंगद देव जी द्वारा रची बाणी और उन्हीं से जुड़े सिद्धांतों का ही करते। उन्होंने स्वयं भी अति रसमयी उच्च आध्यात्मिक विचार सम्पन्न भक्ति-भावमय ९०७ शब्दों की रचना की है जिसे पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी ने श्री गुरु ग्रंथ साहिब का संपादन करते समय यथायोग्य स्थान दिया। धर्म प्रचार के लिए गुरदेव जी ने अनेक रचनात्मक परोपकार और सामाजिक सुधार के कार्य किए। धर्म प्रचार के लिए गुरु साहिब ने अलग-अलग क्षेत्रों में २२ मंजियां स्थापित कीं जिनके मुखी सिख, गुरमति के प्रचार के लिए नियत किए गए इनमें तीन मंजियां स्त्रियों को दी गईं। 'सच्चन सच्च', 'मथो मुरारी' और 'बीबी भानी जी' को मंजी दी गई। इसके साथ ५२ पीढ़ियां भी स्थापित कीं जो पूर्णत: स्त्रियों के लिए ही थीं। पीढ़ियों पर बैठ कर वे घर-परिवार के काम-काज करतीं तथा बालकों को गोद में लिए धर्म-प्रचार करतीं। इससे स्त्रियों में चेतना भी आई और उनकी दशा में सुधार भी आता गया। बीबी भानी जी इन पीढ़ियों की मुखिया थीं।

स्त्रियों के प्रति गुरदेव विशेष तौर पर

**1801-C, Mission Compound, Near St. Mary's Academy, Saharanpur (U.P.)-247001*

संवेदनशील थे। स्त्रियों के सम्मान और सामाजिक प्रतिष्ठा के प्रति सिख धर्म विशेष संवेदनशील रहा है। श्री गुरु नानक देव जी ने ही स्त्री जाति पर होने वाले अत्याचारों की निंदा की थी और समाज में उसे बराबरी का अधिकार दिया था। श्री गुरु अमरदास जी ने पर्दा-प्रथा, बाल-विवाह आदि का विरोध किया और विधवा-विवाह एवं अन्तर्जातीय विवाह की अनुमति दी। उन्होंने सती-प्रथा का भी जोरदार खंडन किया। सती-प्रथा का खंडन उन्होंने हरिद्वार कनखल सती घाट पर किया जहां उनकी स्मृति में खूबसूरत सोने के २२ कलशों वाला गुरुद्वारा बना हुआ है।

गुरु साहिब गुरु बनने के बाद फिर हरिद्वार आए और यहीं सती घाट कनखल पर ठहरे जहां पहले ठहरा करते थे। लेकिन इस अंतिम हरिद्वार-यात्रा का उद्देश्य कुछ अलग ही था। श्री गुरु रामदास जी महाराज ने तुखारी राग में एक 'छंद' की रचना की है। इस बाणी में उन्होंने श्री गुरु अमरदास जी की इस हरिद्वार यात्रा का वर्णन किया है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब के पन्ना १११६ पर छ: पदों का छंद है जिसमें चौथे पातशाह अपने प्रिय गुरदेव जी की यात्रा का उद्देश्य स्पष्ट करते हैं कि:

नावणु पुरबु अभीचु गुर सतिगुर दरसु भइआ ॥
दुरमति मैलु हरी अगिआनु अंधेरु गइआ ॥
गुर दरसु पाइआ अगिआनु गवाइआ अंतरि जोति प्रगासी ॥
जनम मरण दुख खिन महि बिनसे हरि पाइआ प्रभु अबिनासी ॥ *(पन्ना १११६)*

इस यात्रा का उद्देश्य गुरु नानक साहिब की बाणी द्वारा उपदेश और लोक-कल्याण एवं मानवता का उद्धार करना था:

तीरथ उदमु सतिगुरू कीआ सभ लोक उधरण अरथा ॥
मारगि पंथि चले गुर सतिगुर संगि सिखा ॥
(पन्ना १११६)

यह पुरुषार्थ गुरु साहिब ने लोक-कल्याण के लिए किया। उनके साथ अनेकों सिख संगतें चलीं। मार्ग में चलते हुए सभी हरि-कीर्तन और हरि-भक्ति करते चले:

अनदिनु भगति बणी खिनु खिनु निमख विखा ॥
(पन्ना १११६)

सर्वप्रथम पड़ाव कुरुक्षेत्र तीर्थ-स्थल पर किया गया जहां लोग गुरु-दर्शन को आए:

प्रथम आए कुलखेति गुर सतिगुर पुरबु होआ ॥ . . .
दुतीआ जमुन गए गुरि हरि हरि जपनु कीआ ॥
(पन्ना १११६)

हरि-हरि नाम जपते हुए दूसरा पड़ाव यमुना नदी के किनारे संभवत: यमुना नगर के जगाधरी क्षेत्र पर किया गया होगा। उन दिनों मुगल राज्य में नदी पार की तीर्थ-यात्रा के लिए कर देना पड़ता था और वहां जो मसूलिए बैठे होते थे वे यमों से कम कठोर स्वभाव के नहीं होते थे। परन्तु गुरदेव जी की सौम्य सूरत के दर्शन मात्र से मसूलिए ऐसे प्रभावित हो गए कि वे गुरदेव जी को विस्मादित नेत्रों से देखते ही रह गए। उन्हें कर वसूलने का ध्यान ही नहीं आया। गुरु जी के संग चल रही संगत से भी उन्होंने कुछ वसूली नहीं की। गुरदेव की शरण में जो आ जाता है उसे यम-जागाती लूटता नहीं है, लूटना तो दूर छूने तक का साहस भी नहीं करता:

गुर बचनि मारगि जो पंथि चाले तिन जमु जागाती नेड़ि न आइआ ॥
सभ गुरू गुरू जगतु बोलै गुर कै नाइ लइऐ सभि छुटकि गइआ ॥ *(पन्ना १११६)*

तीसरा पड़ाव गंगा के तट पर हुआ। यहां तो विचित्र कौतुक हुआ। गुरदेव जी के दर्शन से सब इतने विमोहित हो गए कि किसी पंडे पंडित साधू को संग के यत्रियों से एक छदाम भी मांगने का ध्यान नहीं आया। अन्यथा

हरिद्वार के ये पंडे-पुरोहित दर्शनार्थियों को ठगने के चक्कर में ही रहते हैं। पर यहां तो सभी आश्चर्यचकित हो गुरु जी के दर्शन करते रहे, उनके मधुर बोल, मीठे उपदेश सुनते रहे:

त्रितीआ आए सुरसरी तह कउतकु चलतु भइआ ॥
सभ मोही देखि दरसनु गुर संत किनै आढु न दामु लइआ ॥
आढु दामु किछु पइआ न बोलक जागातीआ मोहण मुंदणि पई ॥ (पन्ना ११९६)

यहां गुरु जी ने कनखल सती घाट पर विश्राम किया। यहां नगर के सभी संभ्रान्त पुरुष एकत्रित होकर गुरु जी की निकट शरण में आकर बैठे, संगत जुड़ी, प्रभु की स्तुति, कीर्तन, यश-गायन हुआ। गुरु जी ने वेद-शास्त्र, स्मृति ग्रंथ, पुराण, भक्त-बाणी, राम-कृष्ण अवतार आदि के बारे में अपने विचार प्रकट किए। सभी ने ध्यान से सुने और तब गुरु साहिब जी ने गुरु नानक पातशाह जी की बाणी, भक्ति-पद्धति, उनके मूल सिद्धांत, उनके मधुर उपदेश सब को सुनाए। सभी इन उपदेशों को सुनकर इतने प्रसन्न हुए कि सभी ने इन विचारों को 'सही कीता' माना स्वीकार किया और शीश झुकाया। उन्होंने विचार-चर्चा भी की, मन की शंका प्रकट की, गुरु जी ने सभी को संतुष्ट किया और तब सभी गुरु-चरणों पर समर्पित हो गए :

गुरु सतिगुरु गुरु गोविदु पुछि सिम्रिति कीता सही ॥
सिम्रिति सासत्र सभनी सही कीता सुकि प्रहिलादि स्रीरामि करि गुर गोविदु धिआइआ ॥ . . .
कीरतन पुराण नित पुंन होवहि
गुर बचनि नानकि हरि भगति लही ॥
मिलि आए नगर महा जना गुर सतिगुर ओट गही ॥ (पन्ना ११९७)

सहारनपुर नगर के कुछ पुरातन सिख-श्रद्धालुओं का विचार है कि गुरदेव जी सहारनपुर नगर से होते हुए हरिद्वार गए थे क्योंकि उन दिनों हरिद्वार उत्तर प्रदेश के सहारनपुर जिले में ही था और यह क्षेत्र विकसित था। यहां के संभ्रांत नागरिक महाजन गुरदेव जी का आगमन सुनकर दर्शन करने कनखल पहुंचे और विचार उपदेश श्रवण किए।

हरिद्वार कनखल सती घाट पर हिन्दू स्त्रियां पति की मृत्यु पर, पति के शव-दहन पर, पति की चिता पर ही जीवित बैठकर जल जाती थीं, सती होती थीं। गुरु साहिब ने यहां इस प्रथा का घोर विरोध किया और इस प्रथा को रोका। उन्होंने उपदेश किया कि पति के साथ जल कर मर जाने में विवेकशीलता नहीं है। पति-प्रेम का उदाहरण तो जीवित रहकर पति-विछोह की पीड़ा को सहन कर प्रभु परमात्मा का नाम-सुमिरन करते हुए शरीर को लोक-कल्याण में लगा देने में है:

सतीआ एहि न आखीअनि जो मड़िआ लगि जलंन्हि ॥
नानक सतीआ जाणीअन्हि जि बिरहे चोट मरंन्हि ॥ (पन्ना ७८७)

यहां हरिद्वार कनखल सती घाट पर श्री गुरु अमरदास जी की पावन स्मृति में बहुत सुंदर गुरुद्वारा बना हुआ है। इसकी इमारत पर सोने के बाईस कलश लगे हुए हैं। सोने के बाईस कलशों की सेवा महाराजा पटियाला, महाराजा फरीदकोट और महाराजा नाभा एवं संगरुर के महाराजा ने करवाई है। इसमें सिन्धी श्रद्धालुओं का भी योगदान है। इसके साथ काफी जमीन भी है, फलदार बाग-बगीचा भी है। आए-गए यात्रियों की सेवा-संभाल एवं विश्राम की भी यहां पर पूर्ण व्यवस्था है। *(विस्तृत विवरण सहारनपुर के गुरुद्वारों का इतिहास, सहारनपुर सन्दर्भ ग्रंथ, संदर्भ प्रकाशन, संपादक डॉ. के. के. शर्मा, अध्यक्ष एवं रीडर इतिहास विभाग, जे. वी. जैन कालेज, सहारनपुर, पृष्ठ ४६२)*

भक्ति और शक्ति के संयोजक
श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी

*-डॉ मनमोहन सिंघ**

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का जन्म २१ आषाढ़, सं. १६५२ (संवत् नानकशाही १२७) तदानुसार १९ जून, सन् १५९५ को अमृतसर के निकट वडाली नामक ग्राम में माता गंगा जी की पावन कोख से हुआ। पिता श्री गुरु अरजन देव जी ने उन्हें *'पूत भगत गोबिंद का'* अथवा *'सच्चे सतिगुरु द्वारा भेजा गया'* बताया जिसके द्वारा धर्म की शक्ति की स्थापना होगी और सत्य की बेल फले-फूलेगी:

वधी वेलि बहु पीड़ी चाली ॥
धरम कला हरि बंधि बहाली ॥
(पन्ना ३९६)

धर्मान्ध सुन्नी समर्थकों के बल पर शहजादा सलीम, जहांगीर के नाम से २४ अक्तूबर सन् १६०५ ई को हिन्दोस्तान का सम्राट बना। उसने राजगद्दी पर बैठते ही मुस्लिम प्रजा को प्रसन्न करने के लिए गैर-मुस्लिम जनता पर दमनचक्र चला दिया। इसी संदर्भ में झूठे दोष लगाकर श्री गुरु अरजन देव जी को क्रूर यातनाएं देकर शहीद किया गया। मुगलशाही के इसी आतंकमयी वातावरण में मात्र ग्यारह वर्ष की अल्प आयु में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी राजगद्दी पर आसीन हुए। समकालीन सिख विद्वान भाई गुरदास जी का कथन है:

पंजि पिआले पंजि पीर छठमु पीरु बैठा गुरु भारी।
अरजनु काइआ पलटि कै मूरति हरिगोबिंद सवारी। *(वार १:४८)*

अर्थात् पूर्व पांच गुरु साहिबान ने अमृतबाणी के पंचामृत संदेश मानवता को दिए। अब छठम गुरु, गुरु-पद पर आसीन हुए हैं जो महान पराक्रमी हैं। वास्तव में पंचम गुरु श्री गुरु अरजन देव जी की आत्मिक शक्ति ने ही अब श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब का पराक्रमी रूप धारण किया है।

परिस्थितियों के अनुरूप सत्य, धर्म और आत्म-सम्मान की रक्षा के लिए गुरु-पद पर आसीन होते ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी-पीरी की दो तलवारें धारण कीं। एक पीरी अर्थात् गुरुता का प्रतीक थी, दूसरी मीरी अर्थात् राज सत्ता की। जब समकालीन राजनीति धर्म की जड़ें उखाड़ने पर उतारू हो जाए तो धर्म-संरक्षक दैवी पुरुषों को अपने आध्यात्मिक बल को भौतिक रूप देना ही पड़ता है, क्योंकि धर्म-विहिन राजनीति अराजकता का रूप धारण कर लेती है। डॉ मोहम्मद इकबाल के कथनानुसार:

जलाले बादशाही हो, या जमहूरी तमाशा हो,
जुदा हो दीं सियासत से, तो रह जाती है चंगेज़ी।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने वीर योद्धाओं और सेनानायकों के सभी क्रिया-कलाप शुरू कर दिये। वे अपने सिखों को आध्यात्मिक शिक्षा देने के साथ-साथ सैनिक प्रशिक्षण भी दिलवाने लगे। इसी उद्देश्य के लिए आपने श्री हरिमंदर साहिब के सामने श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण करवाया जहां पर आप अपने

**८८९, फेज १०, मोहाली-१६००६२*

अनुयायियों को देश की राजनैतिक परिस्थितियों से अवगत कराने और सैनिक प्रशिक्षण देने लगे। तत्कालीन शासकों के दमन, शोषण और अत्याचार से प्रताड़ित जनसमूह, गुरदेव के संरक्षण में संगठित होने लगा। देश-विदेश से श्रद्धालु और समर्पित युवा, गुरु जी की सेना में भर्ती होने लगे जिनमें सभी धर्मों, जातियों और वर्गों के लोग थे। यहां तक कि कई मुसलमान भी गुरु जी की सेना में भर्ती हो गए और उनमें से कुछ तो सेनानायक भी बनाये गये। गुरु जी के महान उद्देश्यों की चर्चा करते हुये डंकन ग्रीनलीज ने अपने ग्रंथ 'गास्पल ऑफ गुरु ग्रंथ साहिब' में लिखा है--'गुरु हरिगोबिंद को मात्र पिता के बलिदान का बदला नहीं लेना था, उन्हें केवल मुसलमानों को सिख-शक्ति का सम्मान करने की शिक्षा ही नहीं देनी थी बल्कि उन्हें निर्मम, शोषक और लहू-प्यासी बर्बरता द्वारा दीर्घ काल से प्रताड़ित जनता को मुक्ति दिलाने का कार्य आरम्भ करना था।'

गुरु जी द्वारा इस प्रकार सैन्य संगठन करना, मुगल शासकों को कैसे सहन होता? जहांगीर ने उन्हें ग्वालियर दुर्ग के राजकीय कारागार में डाल दिया। परन्तु इस सरकारी दमन को चुनौती देने के लिए पंजाब की जनता गांव-गांव से उमड़ पड़ी। आये दिन जनसमूह जत्थे बनाकर ग्वालियर जाने लगे। दिन-प्रतिदिन बढ़ते जनाक्रोश से और कुछ नेकदिल मुसलमान मंत्रियों का परामर्श मानकर सम्राट ने दो वर्ष पश्चात् केवल गुरु जी को ही रिहा नहीं किया बल्कि उनके अनुरोध पर अन्य बंदी बनाये गए ५२ हिंदू पहाड़ी राजाओं को भी मुक्त कर दिया। इस प्रकार श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब 'बंदीछोड़ दाता' के नाम से भी विख्यात हुए।

सम्राट जहांगीर गुरु जी के लोक-कल्याण के आध्यात्मिक उद्देश्य को समझ गया, इसीलिए अपने शेष राज्य-काल में उसने उनके विरुद्ध कोई आपत्ति नहीं उठाई। गुरु जी ने इस शांतिकाल का सदुपयोग करते हुए उत्तरी और पूर्वी देश की यात्राएं कीं। उन्होंने जम्मू-कश्मीर, उत्तर प्रदेश और गुजरात का विस्तृत भ्रमण किया और जगह-जगह प्रभु के अमृत-नाम की मृदुल वर्षा करते हुए जनमानस का उद्धार किया। विशेष अवसरों पर आपने दुखी और पीड़ित लोगों की यथासंभव अधिक से अधिक सहायता की। कश्मीर में ताप से पीड़ित असहाय लोगों की स्वयं सेवा की और अपने सिखों से भी करवाई।

मुगल सम्राट शाहजहां के शासन काल में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को मुगल शासकों के साथ संघर्ष करना पड़ा। शासन और अधिकारी प्रजा पर मनमाने अत्याचार, दमन और शोषण करते थे। गुरु जी ने इनका विरोध करने के लिए सशस्त्र सैनिक संगठन तैयार किया। भारी मुगल शासकों के सैन्य दल चार बार गुरु जी पर चढ़ कर आये परंतु हर बार मुंह की खाकर लौटे। अधिकतर आक्रमणकारी सेनापति और फौजदार गुरु जी के हाथों मौत के घाट उतारे गए। गुरु जी की इस सैन्य-शक्ति का मर्म था जनमानस में उनके प्रति अटूट विश्वास और आस्था। वे सच्चे अर्थों में लोगों के हृदय के सम्राट थे। लोग उन्हें 'सच्चा पातशाह' कहकर सम्मानित करते थे। भयंकर दुविधाओं और सैन्य संघर्षों के समय भी गुरु जी अपने दैवी अस्तित्व और कर्त्तव्य को कभी नहीं भूले। प्रसिद्ध इतिहासकार जे. डी. कनिंघम के अनुसार--'अपने अत्यंत व्यस्त जीवन में भी वे अपना मूल आचरण कभी नहीं भूले। सिखों के

(शेष पृष्ठ २८ पर)

जीवन दर्शन : श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी

*-डॉ. रछपाल सिंघ**

छठम सतिगुरु श्री गुरु हरिगोबिंद सिंघ जी का जन्म २१ आषाढ़ सं. १६५२ (संवत् नानकशाही १२७) तदानुसार १९ जून १५९५ ई. को गुरु की वडाली (अमृतसर साहिब से ८ किलोमीटर दूर) में, पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी और माता गंगा जी के गृह में हुआ। गुरु साहिब की पढ़ाई-लिखाई अर्थात गुरबाणी और सिख इतिहास की पढ़ाई, बाबा बुड्ढा जी द्वारा हुई। छोटी आयु में ही आप जी गुरमति ज्ञान के साथ-साथ घुड़सवारी, कुश्ती, तलवार, नेजा, तीरंदाजी और शूरवीरों जैसे कामों में निपुण हो गए थे। बचपन से ही आपका हर श्वास प्रभु-रंग में रंगा हुआ रहता था। श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को युद्ध-विद्या भाई जेठा जी और भाई परागा जी ने तथा घुड़सवारी के करतब भाई सहिगल जी ने सिखाए।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की शारीरिक रचना कमाल की थी, ऊंचा-लंबा कद था। गुरु जी शारीरिक और आत्मिक पक्ष से बहुत बलवान, विनम्र तथा धर्म और राजनीति दोनों में निपुण थे।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की परख करने हेतु श्री गुरु अरजन देव जी ने कृपाण मंगवाई और श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी को कृपाण देकर कहा, "इसका वार अपनी उंगली पर करो।" ज्यों ही श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरु-हुक्म प्राप्त करके अपनी उंगली पर वार के लिए कृपाण को ऊपर उठाया तो तुरन्त ही श्री गुरु अरजन देव जी ने उनका हाथ पकड़ लिया और ऐसा करने से रोक दिया।

श्री गुरु अरजन देव जी की महान शहीदी ने इतिहास में नई सृजणा का आरंभ किया। तभी से शहीदी लहर का जन्म हुआ। बदले हुए हालात में श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने शस्त्र पहनने जरूरी समझे। सिखों के शांत जज्बे ने वीर रस रूप धारण किया। इस शहीदी के बाद सिखों पर दुखों का आरंभ हुआ। सच और धर्म की रक्षा के लिए निर्बल, निमाणे तथा निआसरे समाज की रक्षा के लिए साधारण लोगों का खून भी गर्म हो गया और वे गुरु जी के साथ धर्म-युद्ध में कूद पड़े। वास्तव में धर्म का बीज शहीदों के खून से ही बढ़ता-फूलता है।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की शान दुनिया के बादशाहों से कहीं अधिक थी। भाई गुरदास जी ने आप जी को दीन-दुनी का पातशाह, पातशाहों का पातशाह, ज्योति-स्वरूप तथा अंतरयामी बालक कह कर भी प्रशंसा की है। उस समय के प्रसिद्ध ढाढी अब्दुल्ला और नत्थू मल ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की शोभा में कहा कि आप जी ने मीरी और पीरी की दो तलवारें पहनी हुई थीं जो आप जी की शोभा में बढ़ावा करती थीं। जब गुरु जी तख्त पर विराजमान होते थे उस समय की शोभा का गायन शब्दों में नहीं किया जा सकता।

एक बार बादशाह जहांगीर ने साईं मीयां मीर जी को पूछा कि दुनिया में कोई कामल मुरशिद अथवा ब्रह्मज्ञानी भी है? तब साईं मीयां मीर जी ने उत्तर दिया, "हां, एक थे श्री गुरु अरजन देव जी, जिन्हें आपकी गंदी नीति ने शहीद कर दिया। अब उन्हीं का ही रूप गुरु

**पंजाब कृषि विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय खोज केन्द्र, गुरदासपुर-१४३५२१ (पंजाब)*

हरिगोबिंद साहिब जी हैं।"

बादशाह ने तर्क किया—"आप उसे इतना बड़ा रुतबा क्यों दे रहे हो?"

तब साईं मीयां मीर जी ने कहा—"खुदा के दरबार में जहां पर लेखा होता है, मैं उनको वहां बैठे हुए देखता हूं। वास्तव में वे कामल मुरशिद हैं।"

गुजरात के प्रसिद्ध फकीर शाह दऊला ने श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी का शाही ठाठ-बाठ देखकर कहा:-

"हिन्दू क्या और पीर क्या?
औरत क्या और फकीर क्या?
दौलत क्या और त्याग क्या?
पुत्र क्या और वैराग क्या?

गुरु जी उसकी बात सुन कर मुस्कराए। गुरु जी ने सिखों को बताया कि इस फकीर को अपनी भक्ति और करामातों पर अहंकार है। उसके प्रश्न के उत्तर में गुरु जी ने कहा:-

औरत ईमान,
पुत्र निशान, दौलत गुजरान,
फकीर हिन्दू न मुसलमान।

इसी प्रकार महाराष्ट्र के प्रसिद्ध फकीर संत समरथ रामदास ने गुरु जी पर तर्क किया और पूछा—

"मैंने सुना है कि आप जी गुरु नानक देव जी की गद्दी के वारिस हो। वे तो त्यागी संत थे पर आप ने फौजें, लश्कर, घोड़े, शस्त्र आदि रखे हुए हैं और लोग आपको सच्चा पातशाह कहते हैं—यह कैसी साधगिरि है?"

गुरु जी ने उत्तर दिया—"बातन फकीरी, जाहिर अमीरी। शस्त्र गरीब की रक्षा और जरवाणे की भक्षा के लिए। गुरु बाबा नानक जी ने संसार तो नहीं त्यागा था, माया त्यागी थी।"

यह सुन कर संत समरथ रामदास तुरंत बोल पड़े, "हां! यह अच्छा है। यह बात मेरे मन को अच्छी भावती है।"

संत समरथ रामदास श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की संगत करके बहुत प्रसन्न हुआ। इसी प्रकार गुरु जी के मीरी और पीरी के सुमेल को देखकर वे लोग जो घटिया सोच, मंद बुद्धि और ईर्ष्यालु स्वभाव के थे, वे प्रचार कर रहे थे कि "शस्त्रधारी ब्रह्मज्ञानी नहीं हो सकता अर्थात गुरु नानक देव जी की गद्दी तो फकीरी-संत स्वभाव वाली रही है, पर शस्त्रधारी वेशभूषा गुरु नानक देव जी के मार्ग से विपरीत है। ऐसे लोगों को उत्तर देने के लिए ही, भाई गुरदास जी ने कहा था कि जैसे कुएं में से पानी निकालने के लिए घड़े के गले को कस कर रस्सी बांधनी पड़ती है; काले सांप को मार कर ही मणि प्राप्त की जा सकती है; तेल निकालने के लिए तिलहन को कोहलू में पीड़ना ही पड़ता है; गिरी निकालने के लिए नारियल के सिर पर चोट करके उसे फोड़ना ही पड़ता है। इसी प्रकार ही वे जो लोग गुरु-दोखी हैं, गुरु-निंदक हैं, वे लोहे जैसे कठोर हैं। उनको सीधे करने के लिए, उनके सिर पर हथौड़े से चोट लगानी ही पड़ती है। जालिम, जरवाणे को तलवार के बिना अकल नहीं आती:-

जिउ करि खूहहु निकलै गलि बधे पाणी।
जिउ मणि काले सप सिरि हसि देइ न जाणी।
जाण कथूरी मिरग तनि मरि मुकै आणी।
तेल तिलहु किउ निकलै विणु पीड़े घाणी।
जिउ मुहु भंने गरी दे नलीएरु निसाणी।
बेमुख लोहा साधीऐ वगदी वादाणी ॥

(वार ३४, पउड़ी १३)

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी की कथा अपरंपार और अकथनीय है। यह अक्षरों के घेरे में नहीं बांधी जा सकती। यह तो बेअंत है। श्री गुरु नानक देव जी का छठम रूप 'दलिभंजन गुरु सूरमा' के रूप में प्रकट हुआ:

दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।

(वार १:४८)

मीरी-पीरी

*-स. बिक्रमजीत सिंघ**

मीरी और पीरी का सुमेल सिख धर्म में एक विलक्षण सुमेल है। मीरी और पीरी दोनों फारसी के शब्द हैं। मीरी जहां राज-सत्ता का प्रतीक है वहां पीरी धर्म (आध्यत्मिकता) का प्रतीक है। सिख धर्म में यह एक बड़ी प्राप्ति है। संसार के इतिहास में ऐसा कहीं भी नहीं मिलता जहां भक्ति और शक्ति का शुद्ध रूप में सुमेल हो।

सन् १६०६ ई में श्री अकाल तख्त साहिब का निर्माण कर श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने सिखों के मन से दुनियावी तख्तों के और उनके द्वारा पैदा किए डर को दूर किया। उन्होंने सियासत के ऊपर धर्म का कांटा लगा सियासत को मानवी सेवा के साथ जोड़ा। जो मनुष्य इस असीम जोड़ में से पैदा हुआ, वह संत-सिपाही बना।

दुनिया के इतिहास में मीर (राज करने वाला) की तलवार में जोर और पीर (धर्म का मुखिया) के बोल में शक्ति मानी गई है। आज तक मीर ने तलवार के जोर से जुल्म किए थे या फिर पीर की तरह जन, जर, जमीन को हथियाने के लिए, दूसरों के धर्मों को खत्म करने के लिए कई तरह के अमानवीय कार्यों को अंजाम दिया था। छठे गुरु श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने गुरु नानक साहिब के सिद्धांत पर पहरा देते हुए मानवता के इतिहास में पहली बार 'तलवार' की जन-विरोधी शक्ति को 'कृपाण' का रूप देकर जनहित के लिए बदला।

अगर हम मीर और पीर अर्थात (राज करने वाला और धर्म का संचालक) के इतिहास पर नज़र डालें तो हमें यह पता चलता है कि मीर के हाथ में हथियार रहा, बल रहा, और सियासत रही। इन शक्तियों के कारण और बल के जोर पर वह पीर को भी अपने अधीन करता रहा। इसी तरह पीर कहलवाने वाले अधिकतर लोगों ने भी शगुन-अपशगुन, श्राप, दुआ, बद्दुआ, जन्नत और जहन्नुम के डर से लोगों को भ्रम-संसे में फंसा कर रखा था।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी और पीरी को नया रूप देते हुए इन दोनों को एक साथ करके गुरु नानक नाम-लेवा सिखों सहित हरेक मनुष्य को मीर और पीर होना सिखाया। उन्होंने मीरी और पीरी को सही ढंग से अपनाने की नीति संसार को बताई।

गुरु साहिब द्वारा बनाया मीरी और पीरी का संकल्प एक नया संकल्प था जो कि सिद्धांत, आदर्श-ख्याल, परमात्मा का रूप, अकाल पुरख की नियमावली का प्रतीक, एक महान फलसफा, ब्रह्मांड की चालक-शक्ति के साथ एक सुर होने का भेदभरा नुसखा और दृष्टिकोण था।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने मीरी और पीरी, भक्ति और शक्ति, संत और सिपाही, धर्म और सियासत, ज्ञान और खड़ग का जो सुमेल बाबा बुड्ढा जी के हाथों से, गुरगद्दी पर बैठने के समय मीरी की और पीरी की कृपाणें पहन कर प्रस्तुत किया उसकी मिसाल पूरी दुनिया के इतिहास में नहीं मिलती।

मीरी और पीरी दोनों का इकट्ठा संचार करने का उद्देश्य बहुत ही स्पष्ट था। यह न तो बदले की भावना थी और न ही समय की हकूमत की तरह राज-सत्ता की भूख, बल्कि यह सुमेल स्वाभिमान, गर्व, इज्जत और आजादी से जीने तथा संस्कृति को शुद्ध रूप में कायम करने के लिये था।

जब मीर अपने कर्त्तव्य को भूल कर

S/o S. Ranjit Singh, 2946/7, Bazar Loharan, Chowk Lashmansar, Sri Amritsar.

मानवता के प्राथमिक हकों पर कब्जा कर लेता है तो फिर ऐसी जलालत भरी जिंदगी से लोगों को निजात दिलवाने के लिए परिवर्तन जरूर आता है। यही परिवर्तन श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने लाने हेतु मीरी और पीरी दो कृपाणें धारण कीं। इस दृश्य का वर्णन करते हुए गुरु साहिब के दरबारी ढाडी कवि अब्दुल्ला और नत्था मल ने अपनी वार में गुरु साहिब की महिमा का बयान करने हेतु निम्न पंक्तियां गायन कीं:

दो तलवारी बद्धीआं इक मीर दी, इक पीर दी।
इक अजमत दी इक राज दी, इक राखी करे वजीर दी।

परन्तु दूसरी तरफ गुरु-घर में कुछ सिखों के मनों में इस तरह के परिवर्तन पर गलतफ़हमी उत्पन्न हुई। भाई गुरदास जी इन सभी हालात का वर्णन करते हुए लिखते हैं:

धरमसाल करि बहीदा इकत थाउं न टिकै टिकाइआ।
पातिसाह घरि आवदे गड़ि चड़िआ पातिसाह चड़ाइआ।
उमति महलु न पावदी नठा फिरै न डरै डराइआ।
मंजी बहि संतोखदा कुते रखि सिकारु खिलाइआ।
बाणी करि सुणि गांवदा कथै न सुणै न गावि सुणाइआ।
सेवक पास न रखीअनि दोखी दुसट आगू मुहि लाइआ। (वार २६:२४)

भाई गुरदास जी लोगों की आशंका खत्म करने के लिए कहते हैं कि यहां कोई नया परिवर्तन नहीं हुआ, जो गुरु-घर का मार्ग पहले था वही अब है:

पारसवंसी होइ कै सभना धातू मेलि मिलंदा। . . .
सतिगुर वंसी परम हंसु गुरु सिख हंस वंसु निबहंदा।
पिअ दादे दे राहि चलंदा ॥ (वार २६:२९)

गुरु साहिब के कार्य मीरी की तरह होने के बावजूद भी उनमें पीरी जैसा गुण तत्व रूप सदा कायम रहा। गुरु जी द्वारा शस्त्रों से लैस होकर और फौजें-घोड़े, लशकर इत्यादि रखने के कारण जो आशंका पैदा हुई थी गुरु जी ने खुद उत्तर देते हुए उस आशंका को खत्म किया। उन्होंने फरमाया:

बातन फकीरी, जाहिर अमीरी, शसत्र गरीब की रखिआ, जरवाने की भखया के लिए।

अर्थात् धारण किए गए शस्त्र गरीब तथा असहाय जनता की रक्षा के लिए और उन पर अत्याचार करने वालों के खात्मे के लिए हैं।

उपरोक्त विचारों से यह पता चलता है कि श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी ने तत्कालीन समय को सामने रखते हुए धर्म के लिए पैदा हुए संकटों का सामना करने और मानवी हितों की रक्षा के लिए उचित साधन अपनाए।

गुरु जी ने मीरी और पीरी धारण कर मानवता की धार्मिक और राजनीतिक आजादी के लिए सिखों को प्रोत्साहित किया, क्योंकि मुगल हकूमत द्वारा उस समय मानवी हकों पर जो पाबंदी लगाई थी उसे खत्म कर समाज में नया परिवर्तन लाना था।

गुरु जी द्वारा पैदा किया भक्ति और शक्ति का सुमेल धर्म और इतिहास के पन्नों का सुनहरी अध्याय माना जाता है।

गुरु जी की ज्योति और जुगत की इकसुरता प्रकट करते हुए भाई गुरदास जी का कथन है:

दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी। (वार १:४८)

इस प्रकार मीरी-पीरी का संकल्प स्वैरक्षा या आत्म-शासन का प्रतीक है। मीरी का संकल्प मनुष्य को जुल्म और जब्र के खिलाफ हथियार उठाने की प्रेरणा देता है जबकि पीरी इंसान को आचारवान बनने और आत्मिक भलाई के लिए प्रेरती है। मीरी और पीरी के शुद्ध सिद्धांत पर चलते हुए सिखों ने शस्त्रों से अपनी ही नहीं बल्कि समाज के दबे-कुचले लोगों की भी रक्षा की।

श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब ने कम समय में सिख लहर को शस्त्रधारी बना कर एक नया इंकलाबी मोड़ दिया जो कि मीरी और पीरी का मुख्य उद्देश्य था।

सहायक पुस्तक:
गुरभारी (जीवनी श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब), कृत प्रिं. सतिबीर सिंघ।

कविता

मुझे दीजिए बस यह वरदान!

(छठे पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी के जीवन-प्रसंग से प्रेरित)

*-स. कुलदीप सिंह**

एक वृद्धा दुखिया और दीन। गरीब, फटे-हाल, नेत्रों से हीन।
जा पहुँची, गुरु जी के द्वार। दीन स्वर में करने लगी गुहार।
'महाराज! मुझ गरीब पर कुछ दया करो। मेरी झोली भी अपनी रहमतों से भरो।'
गुरु जी ने एक नज़र में ही उसके सारे कष्ट पढ़ लिए।
और उसी एक नजर में, उसके दुख-दर्द हर लिए।
'बोले, माँ कोई वरदान माँग लो।
पर, एक से ज्यादा तुम्हारे नसीब में नहीं है,
एक ही बार, जो माँगना है माँग लो।'
वो दुखियारी जिसकी चादर में थे सैंकड़ों छेद,
एक 'वर' में क्या मांगती?
घर के नाम पर थी टूटी-फूटी झोंपड़ी, आँखों से उसे कुछ दिखता नहीं था।
संतान-विहीन, कमजोर, बलहीन। अबला, लाचार, बीमार, श्रमहीन।
दाने-दाने को मोहताज। न कोई काम न कोई काज। न ड्योढ़ी, न बरतन, न अनाज।
गुरु जी ने एक बार फिर चेताया। अपनी शर्त को पुनः दोहराया।
वृद्धा की दुविधा बढ़ती जा रही थी। उसकी समझ में कोई बात नहीं आ रही थी।
उसे चाहिए थी नेत्रों की ज्योति। अपना स्वास्थ्य, दीर्घ आयु और सुख-समृद्धि।
वो हो गयी होशियार और दूरदर्शी।
उसे चाहिए थी अपनी संतान। और आगे बच्चों की संतान।
उनके रहने का भव्य महल। अपना और बच्चों का सुख-वैभव।
सबके लिए अपार धन-सम्पदा।
और आने वाली पीढ़ियों पर प्रभु का वरदहस्त, आशीर्वाद-कृपा।
पर गुरदेव ने बांध दी थी उसकी जुबान। मांगना था उसको बस एक वरदान।
क्या कुछ ओढ़े क्या निचोड़े? क्या कुछ मांगे क्या कुछ छोड़े?
तभी प्रकाश हुआ उसके मन में। सब कुछ सहज हो गया इक पल में।
हुआ उसे अनोखा ज्ञान। सूझा, मांगूं यूं वरदान।
बोली, 'महाराज यदि आप हुए हो मेहरबान।
मुझे दीजिए बस यह वरदान!
मैं अपनी इन आंखों से, अपने महलों में, अपनी बहूओं को
सोने की मधानी से, बच्चों के लिए, दही रिड़कते हुए देख सकूं!'

*डेज़ मेडिकल रोड, १०७-बी, सिंगार सदन, लखनऊ-२२६००५

दिव्य महापुरुष श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी

*-स. सुरजीत सिंघ**

प्रत्येक समय और हर स्थान पर सहायक होने एवं समस्त रोगों, कष्टों और सुखों के बंधन से मुक्त करने वाले गुरदेव की शक्ति को अनुभव करके ही नित्यप्रति यह सत्य बारंबार दोहराया जाता है—*"श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ।"* विश्व-इतिहास में धर्म एवं मानवीय मूल्यों, आदर्शों, सिद्धांतों की रक्षार्थ ईश्वर की पवित्र आलौकिक एवं पुण्य ज्योति आठवें पातशाह श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी का प्रकाश ८ सावन सं. १७१३ (संवत् नानकशाही १८८) तदानुसार ७ जुलाई १६५६ को पिता श्री गुरु हरिराय साहिब जी एवं माता क्रिशन कौर जी, जो शान्ति, भक्ति और उदारता की साक्षात मूर्ति थीं, के घर शहर कीरतपुर जिला रोपड़ (पंजाब) में हुआ। यहां आजकल ऐतिहासिक गुरुद्वारा शीशमहल साहिब सुशोभित है।

गुरु जी प्रारम्भ से ही सरल, सहज, भक्ति-भाव, प्रेम, त्याग एवं शांति वाले कर्मयोगी थे, जिन्हें सद्भावना, सेवा, परोपकार एवं निरपेक्षता जैसे गुण गुरु-परिवार से विरासत में ही मिले हुए थे। आप ६ कार्तिक, सं. १७१८ (संवत् नानकशाही १९३) तदानुसार ६ अक्तूबर, १६६१ को अल्पायु में ही गुरगद्दी पर आसीन हुए जिसकी परम्परा का निर्वाह वयोवृद्ध एवं विद्वान संत बाबा बुड्ढा जी के पौत्र बाबा गुरदित्ता जी ने सम्पूर्ण किया। समय की संकीर्णता को तोड़ते हुए वैर-विरोध एवं भेदभाव रहित एकता तथा सांझीवालता का उपदेश गुरु जी ने दिया, जहां *'एकु पिता एकस के हम बारिक'* परिलक्षित होकर जात-पात का खंडन है और समस्त विश्व एक ईश्वर की उत्पत्ति का उपदेश है।

मुगल हकूमत के शासक औरंगजेब के कहने पर राजा जय सिंह, जो कि गुरु जी की कृपा का विशेष पात्र था और गुरु-भक्त था, ने गुरु संगतों के माध्यम से अपने विशेष मंत्री परसराम को ५० घुड़सवारों के साथ कीरतपुर गुरु जी के दिल्ली पधारने के निमंत्रण हेतु भेजा और गुरु-भक्तों का आतिथ्य स्वीकार करने की विनम्रतापूर्वक प्रार्थना की जिसे स्वीकारते हुए गुरदेव ने तुरन्त दिल्ली की ओर प्रस्थान कर दिया।

रास्ते में दर्शनार्थ रुकते हुए गुरु जी अम्बाला के पास पंजोखरा शहर पहुंचे जहां एक पंडित लालचंद था जो कई भाषाओं और शास्त्रों का ज्ञाता था किन्तु अहंकार और अज्ञानतावश गुरु जी की आयु को देख उनकी विद्वता पर शंका करने लगा और आध्यात्मिकता परखने के विचार से गुरु जी की संगत में आ गया।

शंका निवारण हेतु गुरु जी ने पंडित लालचंद से किसी भी व्यक्ति को बुलाकर लाने को कह दिया जिस पर बिलकुल अनपढ़ व्यक्ति जिसका नाम छज्जू था, पंडित जी द्वारा गुरु जी के सम्मुख प्रस्तुत किया गया। गुरु जी के आगे श्रद्धापूर्वक नतमस्तक होते ही गुरु जी के आशीर्वाद और दिव्य ज्योति से छज्जू की तो मानो काया ही पलट गयी और सर्वत्र आलौकिक ज्ञान का प्रकाश हो गया। उसने कथित विद्वान

***५७-बी, न्यू कालोनी, गुमानपुरा, कोटा-७*

पंडित द्वारा पूछे गये गीता के कठिन से कठिन समस्त श्लोकों एवं दोहों की व्याख्या बिलकुल सही-सही शब्दों में और सरल भाषा में विस्तारपूर्वक करके सबको आश्चर्यचकित कर दिया।

इस प्रकार मार्ग में उपदेश करते, अनेकानेक प्राणियों का उद्धार करते हुए और भक्ति-ज्ञान की धारा प्रवाहित करते गुरु जी अपने सिखों सहित दिल्ली आ पहुंचे, जहां राजा जय सिंह एवं गुरु-संगत ने श्रद्धापूर्वक अगवानी की। अब हरि-कीर्तन और हरि-यश का गायन निरंतर होने लग गया। आज यहां 'गुरुद्वारा बंगला साहिब' सुशोभित है। औरंगजेब का शहजादा मुअज्जम इसी स्थान पर आत्मिक ज्ञान की चाहत लेकर आया था।

गुरदेव ने ऐसे आलौकिक, आध्यात्मिक और आदर्श जीवन की संरचना की जो समस्त कर्मकाण्डों से मुक्त होकर सच्चाई के मार्ग पर चले, जिसके हृदय में सच्चाई, कथनी-करनी में सच्चाई और जिसकी दृष्टि में भी सच्चाई ही हो। गुरु जी को मानवीय दृष्टिकोण से देखने पर यह परिलक्षित हो जाता है कि आपके कार्यों में जनचेतना और जनहित की भावना ही निहित है। आपके मुख्य सिद्धांत हैं—"कभी किसी का बुरा मत करो और न ही किसी का दिल दुखाओ, झूठ मत बोलो, हमेशा सत्य का ही सहारा लो जो सदा ही शाश्वत है। संयम में रहते हुए काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार से सदैव दूरी बनाये रखो। समस्त प्राणियों एवं जीवों के साथ समभाव रखो एवं शत्रुता का त्याग करो। अच्छे कर्म करो, मनुष्य जन्म से नहीं कर्म से ही महान बनता है। 'जीयो और जीने दो' का आदर्श अपनाओ। किसी से अनायास ही मत डरो और न ही किसी को डराओ। निन्दा मत करो। ज्ञान देने के समान कोई दान नहीं, दया के समान कोई धर्म नहीं, सत्य के समान कोई कीर्ति नहीं और शील के समान कोई श्रृंगार नहीं। छल-कपट एवं कुटिलता से दूर ही रहो। सामाजिक एवं राष्ट्रीय आदर्शों की दृष्टि से विचार करें तो हम गुरु जी को सदैव अन्याय एवं अधर्म की शक्तियों से जूझते हुए पाते हैं जहां असत्य एवं अंधकार पर क्रमश: सत्य एवं प्रकाश की जीत ही गुरु जी का मूलत: परमार्थ है।

दिल्ली में बुखार तथा चेचक रोग बुरी तरह से फैलने लग गया जिसके विकराल रूप धारण करने से जान-माल का नुकसान होने लगा। गुरु जी तो सेवा के पुंज थे इसलिए वे रोगियों की सेवा करने में लग गये। महामारी से निपटने के लिए गुरु जी बिना भेदभाव के रोगियों की रात-दिन तन, मन, धन से सेवा करने लगे और औषधियों तथा लंगर का वितरण कर उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। मर्यादा, सिद्धांतों एवं आदर्शों की तो गुरु जी दिव्य ज्योति थे, इसलिए आप भारतीय संस्कृति की धार्मिक एवं सामाजिक विशिष्टताओं के प्रतीक एवं अनुकरणीय हैं:

विचि दुनीआ सेव कमाईऐ ॥
ता दरगह बैसणु पाईऐ ॥ (पन्ना २६)

अपनी सांसारिक यात्रा पूरी करते हुए श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ३ वैशाख सं. १७२१ (संवत् नानकशाही १९६) तदानुसार ३० मार्च, १६६४ को प्रभु-ज्योति में सदैव के लिए विलीन हो गये, जैसे सूर्य की किरण सूर्य में मिल जाती है। दिल्ली में यमुना नदी के किनारे जहां गुरु जी का अंतिम संस्कार हुआ वहां ऐतिहासिक तीर्थ-स्थल 'गुरुद्वारा बाला साहिब' सुशोभित है, जो आदर्शों एवं सिद्धांतों की रक्षार्थ मानवीय धर्म एवं वैचारिक स्वतंत्रता को बारम्बार स्मरण कराते हुए अमरता प्रदान कर रहा है।

मानवता के हमदर्द श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब

*-प्रो. लालमोहर उपाध्याय**

प्रतिदिन सिख धर्म की प्रार्थना में चर्चा होती है:

श्री हरिक्रिशन धिआईऐ जिस डिठे सभि दुखि जाइ।

श्री गुरु हरिराय साहिब जी गुरगद्दी के वारिस के बारे में चिंतनशील थे। उन्होंने एक बार परीक्षा लेने के लिए एक सिख को कहा कि सुमिरन के समय अपने दोनों पुत्रों (रामराय एवं श्री हरिक्रिशन) को एक-एक सुई चुभोई जाए। रामराय सुई चुभते ही आपे से बाहर हो गए पर बाल हरिक्रिशन साहिब जी शांतिपूर्वक अडिग बैठे रहे। अत: वे *"होनहार वीरवान के होत चिकने पात"* के प्रत्यक्ष उदाहरण साबित हुए। श्री गुरु हरिराय साहिब जी ने अपने बड़े पुत्र रामराय को गुरगद्दी का उत्तराधिकारी नहीं बनाया था, क्योंकि उसने औरंगजेब के दरबार में अपने पिता जी के आदेश के विपरीत अनेक चमत्कार दिखाए और उसने सबसे बड़ी भूल यह की कि औरंगजेब के प्रभाव में उसने गुरबाणी की पंक्ति *"मिटी मुसलमान की पेड़ै पई कुम्हिआर"* में 'मुसलमान' शब्द के बदले 'बेईमान' शब्द का प्रयोग किया। इस तरह झूठ बोलकर बादशाह के दरबार में सम्मान प्राप्त किया। यह समाचार जब श्री गुरु हरिराय साहिब जी को प्राप्त हुआ तो उन्होंने घोषित किया कि वे सारी आयु उनके सामने न आए। सही बात तो यह है कि श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी सच्चाई और भलाई, नम्रता, शांति, नाम-रस की साक्षात प्रतिमूर्ति एवं मानवता के हमदर्द थे। इतना ही नहीं वे अत्यंत सुंदर एवं मनमोहक ख्याल वाले महापुरुष थे। सिख विद्वान भाई साहिब भाई संतोख सिंघ ने उनकी सुंदरता के बारे में लिखा है:

चरन कमल हरिक्रिशन अनूप बने।
नख सीख सकल से उपमान अई सगे।
(नानक प्रकाश)

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी बचपन से ही प्रतापी, उदारचित्त एवं संत-स्वभाव के थे। उन्होंने मानवता की भलाई के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिये। गुरबाणी में लिखा है:

सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब जी ने महामारी के समय दिल्ली वासियों की तन-मन-धन से सेवा की। हैजा और चेचक से पीड़ित लोगों के लिए एक मात्र 'वाहिगुरु' का नाम जपने का मंत्र उन्होंने दिया तथा लंगर भी तैयार कराकर बांटने लगे, जो सच्ची मानवता की सेवा थी। चरणामृत पीने वाले रोग-मुक्त हुए:

जो चरणामृत हमारा पीवे।
सो जन तुरत रोग बिन धोवे।
जिनै चुबचै का जल पीउ।
सोछं पिओ गुरु जग बड़ जीऊ। (पंथ प्रकाश)

गुरु जी दया की मूर्ति थे। गुरु जी रोगियों की सेवा करने में अपना सब कुछ भूल जाते थे। रोगियों की सेवा करते-करते वे स्वयं भी महामारी के शिकार हो गए। सभी अपने रोगों से छुटकारा पाने के लिए उनकी शरण में

** Hindi Deptt., Sri Guru Gobind Singh College, Patna Sahib (Bihar)-800008*

आते। सतिगुरु जी लोगों के दुख दूर करते तथा प्राण-दान देते। इनकी महिमा का वर्णन निम्नांकित दोहे में है:

दरसन श्री हरिक्रिशन के, निपुन हरन गुर तीन।
चरन मनोहर वंदना, जिन सिखन सुख कीन।
(पंथ प्रकाश १५५)

जब गुरु जी का अंतिम समय आया तो उन्हें मालूम हो गया। उनकी माता जी को यह जानकर बहुत दुख हुआ तथा संगत भी उदास हो गई। इस अवसर पर गुरु जी ने कहा:

अब हम पुरधाम को जावैं।
तन तजि जोति समावे।

गुरगद्दी सौंपने की जब बात उठी तो उन्होंने बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से इशारा किया— 'बाबा बकाले'। यह संकेत श्री गुरु तेग बहादर जी के बारे में था।

इस तरह हम देखते हैं कि मानवता की सेवा के लिए उम्र कोई चीज नहीं। वे जिंदगी भर मानवता के हमदर्द बने रहे। संगतें उनकी सेवा-भावना से प्रेरित होकर मानवता की सेवा का लाभ उठा रही हैं। गुरु जी का प्रकाशोत्सव विशेषतया गुरुद्वारा बंगला साहिब दिल्ली में तथा अन्य गुरुद्वारा साहिबान में बड़ी धूमधाम से प्रति वर्ष मनाया जाता है।

कविताएं

प्रभावशाली और ज्ञानवर्धक लेख

'गुरमति ज्ञान' अपने नये रूप में अत्यंत प्रभावशाली होता चला जा रहा है। इसी सिलसिले में मई २००८ का अंक सुंदर अनुभूति प्रदान करता हुआ प्राप्त हुआ। स. गुरदीप सिंघ जी का लेख 'गुरु काल में २२ मंजियां' ने एक विषय के बारे में जानकारी दी जिसके बारे सुना अवश्य था परंतु कुछ खास पता नहीं था। ऐसे लेख गुरु-घर के भूले-बिसरे अनन्य सेवकों से परिचय करा जाते हैं। अन्य लेख भी प्रभावशाली और ज्ञानवर्धक रहे। आप हिंदी में सिख इतिहास एवं गुरबाणी विश्लेषण उपलब्ध करा के अत्यंत महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। डॉ. जसबीर सिंघ जी साबर का लेख 'विश्व मानव जीवन के प्रेरणास्रोत : श्री गुरु ग्रंथ साहिब' बहुत सारगर्भित लेख रहा। इससे स्पष्ट हुआ कि 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' आधुनिक संदर्भों में कितने प्रासंगिक हैं। वाहिगुरु आप सब को ऐसे श्रेष्ठ प्रचार-प्रसार कार्य के लिए असीम बल बख्शे।

-डॉ. राजेंद्र सिंघ
१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर,
मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना)।

ज्ञानवर्धक पठनीय पत्रिका

शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'गुरमति ज्ञान' का मैं आजीवन सदस्य हूं। यह धार्मिक, ऐतिहासिक व ज्ञानवर्धक पठनीय पत्रिका है। इस पत्रिका में सिख धर्म से संबंधित ऐतिहासिक तथ्यों को इतने सुंदर ढंग से उजागर किया जाता है कि इसके लिए लेखकों और संपादक मण्डल को सादर प्रणाम। इस पत्रिका ने मुझे इतना प्रभावित किया कि मैंने अपने साथियों को इसकी कुछ पुरानी प्रतिलिपियां पढ़ने के लिए दीं, जिसके फलस्वरूप द्वारका, नई दिल्ली के लगभग ४० परिवार अपनी इच्छा से इस पत्रिका के आजीवन सदस्य बने। मुझे आशा है कि भविष्य में और अधिक परिवार 'गुरमति ज्ञान' पत्रिका के साथ जुड़ेंगे।

मुझे पूर्ण विश्वास है कि कलयुग में केवल 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी' के उपदेशों पर चलकर ही हम अपने जीवन को सार्थक कर सकते हैं। आपसे प्रार्थना है कि शीघ्र ही 'सिख धर्म मर्यादा विशेषांक' प्रकाशित करें ताकि सभी पाठक 'गुरमति मर्यादा' को अच्छी तरह समझ सकें।

-अरविन्दर सिंघ छतवाल
ए-२०८, सेक्टर-८, द्वारका, नई दिल्ली ।

महान शहीद भाई मनी सिंघ जी

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

भाई मनी सिंघ जी उन खास सिख शख्सियतों में से एक हैं जिन्होंने गुरु साहिबान की शरण में रहकर जीवन-जुगत सीखी और गुरु साहिबान के बाद अपने कुशल नेतृत्व से सिखों का मार्ग-दर्शन किया।

गुरसिख परिवार में जन्म

भाई मनी सिंघ जी के जन्म एवं जन्म-स्थान के विषय में सिख इतिहास ग्रंथ एकमत नहीं दिखाई देते। 'महान कोश' के कर्ता भाई कान्ह सिंघ नाभा समेत अनेक इतिहासकार मानते हैं कि भाई मनी सिंघ जी का जन्म, क्षेत्र पटियाला के एक गांव कैबोवाल में सन् १६६८ ई में हुआ। इस गांव के खंडहरों का टीला आज भी लौंगोवाल गांव के निकट स्थित है।

'प्रमुख सिख शख्सियतां' पुस्तक में डॉ. जसबीर सिंघ ने भाई सेवा सिंघ भट्ट की रचना 'शहीद बिलास' के आधार पर भाई मनी सिंघ जी के जन्म, जन्म-स्थान एवं वंश परम्परा का तर्क-आधारित निर्धारण किया है। इनके अनुसार भाई जी का जन्म सुल्तानपुर के निकट स्थित गांव अलीपुर में चैत्र शुक्ल पक्ष द्वादशी दिन रविवार विक्रमी संवत् १७०१ मुताबिक मार्च के अंतिम सप्ताह में सन् १६४४ ई में हुआ।

वंश-परंपरा के अनुसार भाई मनी सिंघ जी के परिवार का संबंध छठम पातशाह श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब से जा जुड़ता है। भाई साहिब के दादा भाई बलू राव छठम पातशाह के अनन्य सिख एवं सिपहसालार थे। भाई बलू राव पिपली साहिब, अमृतसर की जंग में १५ अप्रैल १६३४ ई को शहीद हुए थे। भाई बलू राव के १२ पुत्र थे। इनमें से दूसरे नंबर पर थे--भाई माई दास। माई दास के दो विवाह हुए थे। पहली पत्नी से सात एवं दूसरी पत्नी से पांच पुत्र हुए। भाई मनी सिंघ जी पहली पत्नी के सात पुत्रों में से एक थे। इस प्रकार भाई साहिब बारह भाई थे और सभी ने सिख आदर्शों की रक्षा के लिए कुर्बानी दी।

बालपन एवं चार गुरु साहिबान की छत्र-छाया मिलना

भाई मनी सिंघ जी के बचपन का नाम 'मनी राम' था और आपको प्यार से 'मनीआ' कहकर बुलाया जाता था। बालक मनीआ जब १३ वर्ष का हुआ तो पिता माई दास उसे लेकर सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के दरबार में कीरतपुर साहिब आये। सप्तम पातशाह इस सुंदर बालक को देखकर अति प्रसन्न हुए और *"मनीआ इह गुनीआ होवेगा बीच जग सारे"* कहकर उसे गुणवान होने का आशीर्वाद दिया। बालक मनीआ गुरु-दरबार में रहकर सेवा आदि के कार्य करते हुए मन पवित्र करने में लग गया। इन्हीं दिनों १५ वर्ष की आयु में मनीआ का विवाह खैरपुर के लखी राय की पुत्री सीतो से हो गया।

बालक मनीआ निरंतर गुरु-घर की सेवा करते रहने से गुरु-परिवार का प्रिय बन गया। सप्तम पातशाह श्री गुरु हरिराय साहिब के ज्योति-जोत समाने के बाद मनीआ आठवें पातशाह श्री गुरु हरिक्रिशन साहिब की सेवा में

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा (लुधियाना), पंजाब।*

आ गया। बाल-गुरु जब सन् १६६४ ई में दिल्ली गये तब भाई मनी राम जी साथ थे। अष्टम पातशाह सिर्फ सात वर्ष की आयु में ज्योति-जोत समा गये। तब भाई मनी राम जी बकाला गांव में प्रभु चिंतन कर रहे श्री गुरु तेग बहादर जी के पास चले आए। इन्हीं दिनों कुछ समय अपने गांव अलीपुर में रहने के बाद श्री गुरु तेग बहादर जी के गुरगद्दी पर विराजमान होने पर भाई मनीआ जी पुन: अनंदपुर साहिब आकर गुरु-सेवा में लीन हो गये।

नवंबर सन् १६७५ ई में जब नवम् पातशाह, औरंगजेब के बुलावे पर दिल्ली गये तो भाई मनीआ जी यानी भाई मनी राम जी को पीछे बाल गोबिंद राय जी (गुरु गोबिंद सिंघ जी) के पास ही रुकने का हुक्म मिला। भाई मनी राम जी के बड़े भ्राता भाई दयाला जी नवम् पातशाह के साथ दिल्ली गये। वहां गुरु जी ने चांदनी चौक में शीश कटा कर शहादत दी तो भाई दयाला जी 'उबलती देग' में उबाल कर शहीद कर दिये गये।

दशमेश पिता की सेवा में भाई मनी राम जी

नवम् पातशाह की शहादत के बाद भाई मनी राम जी श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की सेवा में आ गये। दशमेश पिता सिखों को शस्त्रधारी बनाने में लगे हुए थे। गुरु जी के इन प्रयासों में भाई मनी राम जी पेश-पेश रहे। आप शीघ्र ही चुस्त-फुर्तीले, युद्ध-कला-कुशल योद्धा के रूप में उभरे।

भाई साहिब पाउंटा साहिब में भी दशमेश पिता के साथ ही रहे। देहरादून में जब गुरबख्श नाम के अहंकारी साधू ने दशमेश पिता के प्रति अशुभ वचन बोले तो भाई साहिब ने उसको सोध दिया था।

भाई मनी राम जी ने दशमेश पिता के साथ प्रत्येक युद्ध में उत्साह से भाग लिया। विशेष रूप से आप ने 'भंगाणी के युद्ध' में जौहर दिखाये। इन जंगों में भाई मनी राम जी एक दलेर योद्धा के रूप में उभरे। भाई मनी राम जी की अद्वितीय सेवा से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने सम्वत् १७४८ वि. वैसाखी वाले दिन (सन् १६९१ ई) आपको गुरु-दरबार का 'दीवान' नियुक्त किया।

योद्धा भी और विद्वान भी

भाई मनी राम जी तलवार के साथ-साथ कलम के भी धनी थे। आपको लंगर आदि की सेवा से जब भी फुरसत मिलती आप गुरबाणी का अभ्यास आरंभ कर देते। गुरमति एवं गुरबाणी को समझने के लिए आप ने भाई गुरदास जी की 'वारों' का गहन अध्ययन किया। जब दशमेश पिता ने देखा कि आपकी रुचि अध्ययन-चिंतन की ओर अधिक है, तब आपको लंगर की सेवा से मुक्त करके धर्म-ग्रंथों के अध्ययन-विश्लेषण की सेवा सौंपी गई। थोड़े ही समय में भाई मनी राम जी संस्कृत एवं फारसी के उत्कृष्ट विद्वान बन गये। गुरु साहिब ने आपको एक पाठशाला खोल दी, जहां आप सिखों को धार्मिक विद्या देने लगे। भाई मनी राम जी की श्रेष्ठ विद्वता से प्रसन्न होकर दशम पातशाह ने आपको 'ज्ञानी' का खिताब बख्शा। सिख धर्म के ज्ञानियों में आपका स्थान बहुत महत्वपूर्ण है।

ज्ञानी ज्ञान सिंघ जी ने अपने ग्रंथ 'तवारीख गुरु खालसा' में भाई मनी राम जी की विद्वता को विशेष रूप से सराहा है और आपकी गणना दशमेश पिता के बावन दरबारी कवियों में की है:

कवी बवंजा थे गुर पास।
उन मै गनना इन की खास। (पंथ प्रकाश)

भाई मनी राम से भाई मनी सिंघ

सन् १६९९ ई की वैसाखी वाले दिन दशम पातशाह श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'खालसे' की

सृजना की तो उसी दिन भाई मनी राम जी ने भी लगभग ५५ वर्ष की आयु में, दशमेश पिता के हाथों अमृत छका और भाई मनी राम से भाई मनी सिंघ हो गये:

निज कर ते गुर अंम्रित दीयो।
मनीए थी, सिंघ मनीए कीयो। (शहीद बिलास)

इसी सौभाग्यशाली दिन भाई मनी सिंघ जी के भाइयों एवं पांच पुत्रों ने भी दशमेश पिता के कर-कमलों से अमृत-पान किया और 'सिंघ' सज गये।

श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर की प्रबंध सेवा

इन्हीं दिनों श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर का प्रबंध देखने वाले महंत सोढी हरि जी का देहांत हो गया। इसके बाद उनका पुत्र निरंजन राय गद्दी पर बैठा, परंतु वह अपने सम्प्रदाय को एकजुट न रख सका। इसी वजह से श्री हरिमंदर साहिब का प्रबंध सुचारू रूप से चलाने वाला कोई न रहा। अमृतसर साहिब की संगत ने दशम पिता से आग्रह किया कि श्री हरिमंदर साहिब की प्रबंध व्यवस्था दुरुस्त करने के लिए सिंघ भेजें। दशम पातशाह ने भाई मनी सिंघ जी को पांच अन्य सिंघों--भाई भूपत सिंघ, भाई गुलजार सिंघ, भाई कौर सिंघ, भाई दान सिंघ एवं भाई कीरता सिंघ के साथ श्री हरिमंदर साहिब की मर्यादा बहाल करने के लिए भेजा। भाई साहिब ने इस कर्त्तव्य को बाखूबी निभाया।

अमृतसर-निवास के दौरान भी भाई मनी सिंघ जी कई बार अनंदपुर साहिब आये और गुरु-चरणों में हाजरी भरी।

सम्पूर्ण परिवार का आत्म-बलिदान

भाई मनी सिंघ जी का पूरा परिवार गुरु-घर की सेवा में सदा तत्पर रहा। भाई साहिब के सभी भाइयों ने गुरु-कार्य में जीवन न्योछावर किया। आपके पांचों पुत्र प्रसिद्ध चमकौर की जंग (दिसंबर १७०४ ई) में दोनों बड़े साहिबजादों—बाबा अजीत सिंघ और बाबा जुझार सिंघ के साथ शहीद हुए। मदमस्त हाथी को 'नागणी' के एक ही वार में मार गिराने वाले भाई बचित्तर सिंघ भी भाई मनी सिंघ जी के ही पुत्र थे।

श्री गुरु ग्रंथ साहिब की हजूरी बीड़ को लिपिबद्ध करना

दिसंबर १७०४ ई में जब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने अनंदपुर साहिब छोड़ा तब भाई मनी सिंघ जी को माता सुंदरी जी एवं माता साहिब कौर जी के साथ दिल्ली जाने का आदेश दिया गया। आप माताओं के साथ कुछ समय दिल्ली में रहे। गुरु साहिब जब दमदमा साहिब, तलवंडी साबो पहुंचे तो आप भी माताओं के साथ गुरु-दर्शनों को दमदमा साहिब आ गये।

दशमेश पिता ने दमदमी बीड़ को लिपिबद्ध करने के लिए भाई मनी सिंघ जी को चुना। गुरु जी बोलते थे और भाई साहिब लिखते थे। इस प्रकार 'श्री गुरु ग्रंथ साहिब' की दूसरी बीड़ तैयार हुई। पहली 'आदि बीड़' श्री गुरु अरजन देव जी ने भाई गुरदास जी से लिखवाई थी।

दशम पातशाह जब दक्षिण में जाने लगे तो उन्होंने भाई मनी सिंघ जी को श्री हरिमंदर साहिब की सेवा-संभाल करते रहने का हुक्म दिया। भाई साहिब अमृतसर आ गये और लंबे समय तक सोढी हरि के पुत्रों-पौत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा करने के लिए जंगें करते रहे। इस प्रकार भाई साहिब ने 'मीणे महंतों' के षड़यंत्रों से श्री हरिमंदर साहिब की रक्षा की।

बाबा बंदा सिंघ बहादुर के काल में भाई मनी सिंघ

नांदेड़ में दशमेश पिता के ज्योति-जोत समाने के बाद बाबा बंदा सिंघ बाहदुर गुरु-आज्ञा सिर-माथे धारण करके पंजाब आये और सिखों को नेतृत्व प्रदान किया। बाबा जी की विजयों

ने सिखों का एक बार फिर बोलबाला कर दिया। इस काल में भाई साहिब का पूरा सहयोग बाबा बंदा सिंघ बहादुर को मिला।

बंदई खालसा एवं तत्त खालसा का विलय

सन् १७१६ ई में बाबा बंदा सिंघ बहादुर की शहादत के बाद खालसा पंथ 'बंदई खालसा' और 'तत्त खालसा' में विभाजित हो गया। एक गुट बाबा बंदा सिंघ जी को अपना नेता मानने लगा और बंदई खालसा कहलाया तथा दूसरा गुट तत्त खालसा कहलाया। सिखों में पड़ी इस फूट के कारण सभी सिख नेता दुखी थे। ऐसे में माता सुंदरी जी ने दोनों गुटों में समझौता करवाने की जिम्मेदारी भाई मनी सिंघ जी को सौंपी।

भाई मनी सिंघ जी ने सूझ-बूझ दिखाते हुए दोनों गुटों को श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर की परिक्रमा में आमंत्रित किया। भाई साहिब ने एकता करवाने के उद्देश्य से एक युक्ति सुझाई। दो पर्चियां बनाई गईं। एक पर तत्त खालसे का एवं दूसरी पर बंदई खालसे का उद्घोष लिखा गया। दोनों पर्चियां अमृत सरोवर में छोड़ी गईं। थोड़ी देर में बंदई खालसे की पर्ची डूब गई और तत्त खालसे को विजयी घोषित कर दिया गया। परंतु बंदई खालसे ने यह फैसला मानने से इंकार कर दिया।

इसके बाद बंदई खालसा के पहलवान संगत सिंघ और तत्त खालसा के पहलवान मेहर सिंघ में कुश्ती करवाई गई, जिसे मेहर सिंघ ने जीता। बंदई खालसा वालों ने भी अपनी जिद छोड़ दी और इस तरह भाई मनी सिंघ जी के प्रयासों से सारा खालसा पंथ एक हो गया।

भाई मनी सिंघ जी की शहादत

यह वह समय था जब सिखों को श्री हरिमंदर साहिब में कोई भी आयोजन करने के बदले में मुगल बादशाह को 'ज़जिया' देना पड़ता था। राजनीतिक तौर पर अव्यवस्थित रहने के कारण सिख लम्बे समय से श्री हरिमंदर साहिब में दीवाली नहीं मना पाये थे। सन् १७३३ ई में पंथ ने श्री हरिमंदर साहिब में दीवाली मनाने की योजना बनाई। इसके एवज में लाहौर के सूबेदार जकरिया खान को पांच हजार रुपये 'जजिया' के रूप में देने का समझौता किया गया।

इतने में भाई मनी सिंघ जी को गुप्त सूचना प्राप्त हुई कि लाहौर दरबार और खालसा-विरोधी शक्तियां षड़यंत्र रच रही हैं कि दीवाली पर एकत्र हुए सिखों को घेर कर एक साथ खत्म कर दिया जाये। भाई साहिब ने तुरंत संदेशे भेज कर सिखों को आने से रोक दिया। दीवाली वाले दिन कोई सिख न आया।

इस पर लाहौर का सूबेदार जकरिया खान झल्ला उठा। उसने भाई मनी सिंघ जी को गिरफ्तार करने का हुक्म दे दिया। भाई साहिब साथियों समेत गिरफ्तार करके लाहौर लाये गये। फतवों की आड़ में भाई गुलजार सिंघ, भाई भूपत सिंघ, भाई मुहकम सिंघ, भाई चंन सिंघ, भाई कीरत सिंघ, भाई आलम सिंघ, भाई संगत सिंघ, भाई कान्ह सिंघ आदि पर अनेक अत्याचार किये गये। भाई गुलजार सिंघ जी को उल्टा लटका कर जीते जी खाल उतारी गई। भाई भूपत सिंघ की आंखें नोच कर चरखड़ी पर चढ़ा दिया गया। भाई मनी सिंघ जी को बंद-बंद काट कर शहीद करने का फतवा दिया गया। १ सावन सं. १७९१ तदानुसार १ जुलाई सन् १७३४ ई वाले दिन, लगभग ९० वर्ष की आयु में भाई मनी सिंघ जी को लाहौर के नखास चौक में शरीर का एक-एक बंद काट कर शहीद कर दिया गया। लाहौर किले के निकट जहां भाई मनी सिंघ जी को शहीद किया गया था, वहां गुरु-धाम 'शहीद गंज' सुशोभित है।

सुखमनी साहिब का दार्शनिक अनुशीलन

*-डॉ. निर्मल कौशिक**

सिख परम्परा के पांचवें रत्न श्री गुरु अरजन देव जी का जन्म चतुर्थ गुरु श्री गुरु रामदास जी के घर १९ वैशाख सं. १६२० तदानुसार १५ अप्रैल १५६३ ई को गोइंदवाल जिला तरनतारन में हुआ। उस समय अकबर का राज्य था। जनता किसी ऐसे नेतृत्व की प्रतीक्षा में थी जिससे उसे एक सूत्र में पिरोया जा सके। यह महान कार्य श्री गुरु अरजन देव जी के महान कृत्यों एवं कृतियों से ही सम्पन्न हुआ। अट्ठारह वर्ष की आयु में (१५८१) में आप ने अपने पूज्य पिता जी के ज्योति जोति समाने के पूर्व गुरगद्दी ग्रहण की। आपके बहुपक्षीय गुणों व योग्यता के कारण आपको ही गुरगद्दी का अधिकारी बनाया गया। आप छोटे होने पर भी प्रतिभाशाली व एक उच्च व्यक्तित्व के स्वामी थे। जहां आप प्रभु के सच्चे भक्त थे, वहां अमर कवि, अद्वितीय संपादक, संगीतकार, एक अच्छे पिता, महान उद्यमी, आज्ञाकारी सपुत्र, क्षमावान भाई तथा एक अच्छे मार्गदर्शक भी थे। आपका बड़ा भाई प्रिथीचंद आप से ईर्ष्या करने लगा और कई बार आपको मारने की भी असफल चेष्टाएं की गईं। गुरु जी को आरंभ से ही परम पिता परमात्मा की भक्ति की अटूट लगन थी। अत: आप डरते न थे। आपका सारा जीवन सहनशीलता और नम्रता की प्रत्य उदाहरण है। बड़े भाई प्रिथीचंद की ईर्ष्या में कठिन से कठिन परिस्थिति को प्रेम सहित एवं सहनशीलता से संभाला और कभी भी मन में उसके प्रति विपरीत भाव नहीं लाए।

आप ने १५८८ ई में श्री हरिमंदर साहिब की नींव रख कर सरोवर (अमृत सर) के आधार पर अमृतसर नगर का निर्माण किया। १५९० ई में माझा क्षेत्र में तरनतारन और १५९३ ई में दोआबा क्षेत्र का प्रसिद्ध नगर करतारपुर बसाया। उनकी प्रसिद्धि, योग्यता व सम्मान देख कर उनके विरोधी व मुसलमान शासक उनकी जान लेने पर उतारू हो गए। उनके शीश पर गर्म रेत डाली गई, बदन को गर्म पानी में खौलाया गया मगर वे *"तेरा कीआ मीठा लागै—हरि नामु पदारथु नानकु मांगै"* का गायन करते रहे। आखिर रावी के किनारे ले जाकर उनके पांच भौतिक शरीर को दरिया की भेंट कर दिया। यह बात २ आषाढ़ सं. १६६३ तदानुसार ३० मई १६०६ ई की है।

श्री गुरु अरजन देव जी महान कवि और उच्च कोट के संगीतज्ञ तो थे ही साथ ही साथ इन्हें पूर्ववर्ती गुरु साहिबान एवं समकालीन संतों-भक्तों की बाणी को सुनने व एकत्र करने का भी शौक था जिसके फलस्वरूप आप ने "श्री आदि ग्रंथ साहिब" का सम्पादन किया। साहित्य तथा भाषा की वैज्ञानिक दृष्टि से भी यह पावन ग्रंथ भारतीय साहित्य में अनुपम स्थान रखता है और इसका सारा श्रेय श्री गुरु अरजन देव जी के प्रवीण-प्रखर व्यक्तित्व को है। श्री गुरु ग्रंथ साहिब का सम्पादन निश्चय ही उनकी अपूर्व मौलिक देन है। चयन, संयोजन और सम्पादन में वैज्ञानिकता को देख कर सचमुच ही आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहता। दूसरे, उनकी

**१६३, आदर्श नगर, पुरानी छावनी रोड, फरीदकोट।*

स्वयं रचित बाणी की भी प्रशंसा किए बिना नहीं रहा जा सकता। श्री गुरु ग्रंथ साहिब में सबसे अधिक बाणी उन्हीं की है। इसके अतिरिक्त उन्होंने मुक्तक काव्य, लम्बी बाणियां, वारें और कई फुटकल बाणियां भी रचीं। आपने अपने जीवन को अपनी बाणी में यथार्थ रूप से चित्रित कर उसे जीवन्त रचना बना दिया। उसमें आपके गहरे अनुभव हैं।

सुखमनी साहिब : सामान्य परिचय

सुखमनी साहिब श्री गुरु अरजन देव जी की एक लम्बी विस्तृत बाणी है। मानव-जीवन का लक्ष्य है सुख (आनंद) की प्राप्ति। सुख दो प्रकार का है—लौकिक और आलौकिक। सुखमनी साहिब की विशेष महत्ता यही है कि वह दोनों प्रकार का सुख प्रदान करती है। भाई कान्ह सिंघ नाभा ने महान कोश में इसका अर्थ आत्मिक आनन्द देने वाली मणि किया है।

जो भी हो सुखमनी साहिब श्री गुरु अरजन देव जी की अद्वितीय रचना है, जो उन्होंने १६०१ से १६०४ तक गुरुद्वारा रामसर साहिब के समीप बैठ कर रची थी। इस बाणी में २४ श्लोक और २४ असटपदियां है। श्लोक में समग्र में असटपदी का भाव आ जाता है। सम्पूर्ण सुखमनी साहिब गउड़ी राग में है, जिससे यह संगीतात्मकता के गुणों से भरपूर है। वैसे तो सतिगुरु जी की सम्पूर्ण बाणी मन को शान्ति प्रदान करने वाली है, तपते दिलों को ठण्डा करने तथा असंयमित को संयम प्रदान करने वाली है, तो भी आपकी हरमन प्यारी बाणी सुखमनी साहिब ही है। वास्तव में यह रचना अपने नाम के अनुकूल ही गुणों को धारण किए हुए है।

सुखमनी साहिब : विषय-वस्तु

सुखमनी साहिब का विषय-वस्तु सुख है। सुखमनी साहिब मानव-मन या आत्मा को सुख या आनन्द प्रदान करने के उद्देश्य से रची गई है। स्मरण द्वारा सुख या आनन्द की उपलब्धि सम्भव है:

सुखमनी सुख अंम्रित प्रभ नामु ॥
भगत जना कै मनि बिस्राम ॥ (पन्ना २६२)

नाम जपने से मनुष्य 'साध' की पदवी को पा लेता है। साध की संगति से साधारण मनुष्य भी परम पद को पा लेता है और ईश्वर-रूप हो जाता है। बस यही मानव जीवन का चरम लक्ष्य है जिसकी पूर्ति हेतु सुखमनी साहिब की बाणी हमारा मार्गदर्शन करती है। सुखमनी साहिब में नाम, साध, असाध, ब्रह्मज्ञानी, जीवन-जुगत, सुन, सामधि, मोक्ष, गुरु आदि का विस्तृत वर्णन किया गया है। सुखमनी साहिब की आध्यात्मिकता को देखते हुए 'सारांश' के तौर पर यह कहा जा सकता है कि सुखमनी साहिब भौतिक जगत के विचित्र, मनमोहक दृश्यों में विचरते हुए हउमै-युक्त जीवन का खण्डन करती है और प्रभु के नाम-सुमिरन के आत्मिक मंडल में से गुजरते हुए प्रभु की असीमता, आश्चर्यता और विस्मादकता का अनुभव करते हुए गुरमुख जीवन का मण्डन है। जहां सुखमनी साहिब आत्मा-परमात्मा के संयोग की क्रमिक अवस्थाओं की चेष्टाओं का मार्गदर्शन करती है वहां इसका दार्शनिक महत्व भी कम नहीं है। सुख-दुख, आशा-निराशा, पाप-पुण्य, साधू-असाधू आदि का विश्लेषण व निराकरण सहज ही किया गया है। आज मानव जीवन इतना उलझन भरा, व्यस्त एवं संघर्षयुक्त है कि उसके मन को शान्त करने के लिए अलादीन के चिरागनुमा किसी वस्तु की आवश्यकता है। ऐसा ही एक मात्र आधार श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा कृत सुखमनी साहिब है। उनकी बाणी सुखमनी है। आज के जीवन की समस्याओं का एक सफल समाधान पेश करती है, जो कि कर्मकाण्ड तथा निष्प्राण शुष्क ज्ञान-चर्चा से रहित है। सुखमनी साहिब ऐसी निर्मल बाणी है

जो हमें मानव धर्म तथा शान्ति की शिक्षा देती है। यह मानव जीवन का सही मार्गदर्शन करने वाली तथा धार्मिक एवं सांस्कृतिक एकता का सदुपदेश देने वाली अनन्य तथा अनुपम कृति है।

भाव पक्ष के साथ सुखमनी साहिब का कला पक्ष भी सशक्त एवं प्रौढ़ है। भाषा, छंद, अलंकार, शब्द-चयन, संयोजन, शैली, प्रतीक आदि के माध्यम से हर आशय को स्पष्ट किया है। संगीतात्मकता इसका अन्य गुण है। सम्पूर्ण सुखमनी साहिब गउड़ी राग में है। निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि सुखमनी साहिब आध्यात्मिक, दार्शनिक एवं साहित्यिक दृष्टि से मानवपक्ष एवं कलापक्ष की सर्वोच्चता को लिए हुए है।

सुखमनी साहिब : दार्शनिक विवेचन

दर्शन का सामान्य अर्थ है देखना। मनुष्य अपने जीवन काल में अपने चारों ओर के संसार को देखता है, अनभुव करता है और कालान्तर में उन अनुभवों का निष्कर्ष निकाल कर सत्य-असत्य का निर्णय करता है। इसे ही पूर्वकालीन विद्वानों ने दर्शन का नाम दिया है। फिलासफी न केवल प्रकृति का ज्ञान है बल्कि समाज का भी ज्ञान है। यदि इस ज्ञान का आधार तत्व (फैक्टस) और प्रयोग हो वह विज्ञान कहा जाता है, परन्तु यदि प्रयोग की जगह केवल अनुभव ही हो तो इसे फिलासफी की कहूंगा। इस प्रकार दर्शन प्रत्येक व्यक्ति के जीवन, अवस्थाओं व सामाजिक वातावरण का अनुभव है। देखा जाए तो पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी का जीवन-संघर्षमयी, आध्यात्मिकता से परिपूर्ण, गुरु-परम्परा से प्रेरित व सेवामयी भावना से ओत-प्रोत था। उन्होंने दुखी मनों की आत्मिक शांति हेतु अपने जीवन तत्वों व अनुभवों को बाणी का रूप दिया ताकि उसका अध्ययन कर वे तृप्त हो सकें। सुखमनी साहिब बाणी इसी मूल उद्देश्य से रची गई है। अनुभवाधारित होने के कारण इसे दर्शन का नाम दिया जा सकता है। वैसे तो सुखमनी साहिब में वर्णित सभी बाते गुरमति अथवा सिख-दर्शन से प्रभावित हैं।

गुरमति-दर्शन में वर्णित दार्शनिकता को सुखमनी साहिब में विस्तृत रूप से समझाया गया है। पद्धति बिल्कुल साधारण अपनाई गई है ताकि समझने में कठिनाई न हो। क्रमानुसार ईश्वर-प्राप्ति व सुख का विवरण सराहनीय है। मनुष्य को चाहिए कि वह नाम-सुमिरन कर गुरु के सदुपदेश से हउमै का त्याग कर अपने को 'साध' या 'ब्रह्मज्ञानी' की अवस्था तक ले जाए, यही सुन्न समाधी या मुक्तावस्था है।

सम्पूर्ण सुखमनी साहिब में मानव जीवन को सुखमय तथा आनन्दयम बनाने के लिए हउमै को दूर करने और ईश्वर तक पहुंचने के लिए प्रेरणा दी गई है। इसमें कुछ विशेष महत्वपूर्ण शब्दों का प्रयोग किया गया है, जिसका दार्शनिक विवेचन इस प्रकार है:-

सुखमनी साहिब का मूल संदेश नाम-सुमिरन है। नाम-सुमिरन ही एक ऐसा मूल-मंत्र है, जो मनुष्य के मन को सुख या आनन्द प्रदान करता है।

गुरमुखि नामु जपहु मन मेरे ॥
नानक पावहु सूख घनेरे ॥ (पन्ना २६४)

नाम को हृदय में बसाने के लिए उसका सुमिरन करना अनिवार्य है। सुमिरन द्वारा ही जीव माया-जाल से निकल कर परम पद को पा सकता है, उसके सम्पूर्ण दुखों और कलेशों का नाश हो जाता है:

प्रभ कउ सिमरहि से सुखवासी ॥
प्रभ कउ सिमरहि सदा अबिनासी ॥(पन्ना २६३)

श्री गुरु अरजन देव जी के अनुसार 'गुरु' वह है जो अंधेरे में प्रकाश करके हमारा नेतृत्व करता है। सतिगुरु की कृपा से ही ईश्वर की

प्राप्ति सम्भव है। सतिगुरु वही हो सकता है जिसने सत्य को पहचान लिया है और स्वयं भी ब्रह्म रूप हो गया है।

सति पुरखु जिनि जानिआ सतिगुरु तिस का नाउ ॥
तिस कै संगि सिखु उधरै नानक हरि गुन गाउ ॥
(पन्ना २८६)

सुखमनी साहिब में साध शब्द का अत्यन्त विस्तार से वर्णन किया गया है। सामान्य रूप से इसे सज्जन पुरुष या महात्मा के अर्थ में लिया जाता है। आध्यात्मिक दृष्टि से इसका अर्थ है जिसने साधना द्वारा अपने को शुद्ध करके उस परम पद या ईश्वर को पा लिया है। ऐसे आदर्श महापुरुष की संगत को ही श्री गुरु अरजन देव जी ने 'साध संगति' का नाम दिया है।

साध की सोभा साध बनि आई ॥
नानक साध प्रभ भेदु न भाई ॥ (पन्ना २७२)

सुखमनी साहिब में ब्रह्मज्ञानी शब्द को अत्यन्त व्यापक रूप में लिया गया है। 'ब्रह्मज्ञानी' का अर्थ है, जिसे ब्रह्म का ज्ञान हो। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ब्रह्म का ज्ञान होने से वह तद्‌रूप हो गया हो। मन, वचन और कर्म से एक हो। श्री गुरु अरजन देव जी लिखते हैं:

मनि साचा सुखि साचा सोइ ॥
अवरु न पेखै एकसु बिनु कोइ ॥
नानक इह लछण ब्रहम गिआनी होइ ॥
(पन्ना २७२)

संत की निंदा को सबसे बड़ा अपराध माना गया है। संत की स्तुति सबसे बड़ा पुण्य है तथा संत की निंदा एक प्रकार से व्यसन है। व्यसन तो व्यसन ही है चाहे वह किसी भी प्रकार का क्यों न हो। निन्दा भी एक व्यसन है। सुखमनी साहिब में श्री गुरु अरजन देव जी ने संत-निन्दक के स्वभाव और निन्दा करने के कारण हुई उसकी दुर्दशा का बड़ा प्रभावशाली चित्र पेश किया है:

संत सरनि जो जनु परै सो जनु उधरनहार ॥
संत की निंदा नानका बहुरि बहुरि अवतार ॥
(पन्ना २७९)

सुखमनी साहिब में वर्णित ईश्वर इस विश्व के कण-कण में विद्यमान है। वह अविनाशी है। उसी को ੴ के नाम से अभिहित किया गया है। सारी सृष्टि उसी के (हुक्म के) अधीन है:

नाना बिधि कीनो बिसथारु ॥
प्रभु अबिनासी एकंकारु ॥ (पन्ना २८४)

सुखमनी दर्शन : मानव केन्द्र : संस्कृति

मानव जीवन का चरम लक्ष्य आनन्द, परम पद या ब्रह्म की प्राप्ति है। इसके लिए सुखमनी साहिब में अवस्थाओं का क्रमिक निरूपण किया गया है। उस ब्रह्म से मेल कराने वाला केवल नाम ही है। नाम का साधन व विधि स्वयंमेव नहीं अपितु साध की संगत व सत्य पुरुषों की कृपा से ही सम्भव है और इनकी संगत ईश्वर की कृपा से ही होती है। इनकी सहायता से सतिगुरु तक पहुंचा जा सकता है, जो ईश्वर रूप है और ईश्वर (सच) को जान चुका है।

सतिगुरू के उपदेश से हउमै का नाश होता है और जीव सहजावस्था को प्राप्त होता है, जिसे निर्वाण या मोक्ष कहा गया है। इसे सम्पूर्ण एकाग्रता की दशा भी कहा जाता है। यही दशा अनेक भक्तों व संतों द्वारा गूंगे का गुड़ कही गई है। इसमें शारीरिक अनुभव की अपेक्षा आत्मिक अनुभव का प्राधन्य रहता है। उसकी चेतना निरंकार से एकस्वर हुई होती है कि उसे उसका हुक्म मानते समय कोई बोझ महसूस नहीं होता। जब तक उसकी हउमै कायम थी, वह हुक्म मानने में विघ्न डालती थी।

संक्षेप में सुखमनी साहिब के अनुसार सांसारिक दुखों में फंसा मनुष्य गुरु की शरण में आकर, साधुओं की संगत में प्रभु के नाम

का सुमिरन करके, घट-घट में व्याप्त भगवान का ज्ञान प्राप्त करके, उसके हुक्म से एक रूप होकर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार का नाश करके ब्रह्मज्ञानी बनता है। सुखमनी साहिब मानव की सुखात्मक अनुभूति को परिलक्षित करने में और मानवीय गुणों की वृद्धि करने में सहायक सिद्ध होती है। इसका दर्शन मानव-केन्द्रित है।

सुखमनी साहिब जीवन की अनुभूतियों का संग्रह ग्रंथ है, जिसके माध्यम से श्री गुरु अरजन देव जी ने मानव जीवन की सार्थकता हेतु सुख, आनंद, परमपद तक पहुंचने का सहज ढंग से निर्देशन किया है। मोटे तौर पर इसे अध्यात्मवाद के निकट कहा जा सकता है मगर कुछ लोग इसे दर्शन के अन्तर्गत मानते हैं क्योंकि आत्मा द्वारा परमात्मा का सम्पर्क या दर्शन ही दर्शनशास्त्र का विषय है। अत: सुखमनी साहिब में आध्यात्मिक और दार्शनिक दोनों धाराओं का संयोजन अत्यन्त सुचारू रूप से हुआ है। दोनों का उद्देश्य एक है सुखानुभूति व परम पद की प्राप्ति। वास्तव में गुरमति सिद्धांत श्री गुरु नानक देव जी के आध्यात्मवाद व दार्शनिकता का सुमेल है और सुखमनी साहिब गुरमति सिद्धांत का प्रतिपादन भी करती है। पंचम पातशाह ने उनकी परंपरा को आगे बढ़ाया और दार्शनिक दृष्टि से जीव, जगत, माया, ब्रह्म की सरल ढंग से व्याख्या की। सिख दर्शन का भारतीय परम्परा के अनुसार प्रचार एवं प्रसार इनका मूल उद्देश्य था।

निष्कर्ष रूप से कहा जा सकता है कि सुखमनी साहिब श्री गुरु अरजन देव जी की काव्य-दार्शनिक अनुपम उपलब्धि है। प्राचीन भारतीय चिन्तनधारा का गुणात्मक पक्ष दर्शन के घटकों में ढल कर निर्गुण चेतना का वाहक बना है। श्री गुरु अरजन देव जी की प्रस्तुत बाणी दार्शनिक अनुभूतिजन्य तो है ही इसके साथ ही अनुभव ज्ञान की भी गहन निधि है। अत: सुखमनी साहिब का दार्शनिक अनुशीलन मनोवैज्ञानिक अध्ययन की नई सम्भावनाओं को उद्भासित करता है।

भक्ति और शक्ति के संयोजक . . . *(पृष्ठ १० का शेष)*

इस दृढ़ विश्वास के अनुरूप ही आदि गुरु की आत्मिक ज्योति उनके उत्तराधिकारी गुरु साहिबान में विराजमान है, उन्होंने स्वयं को नहीं जतलाया बल्कि गुरु नानक पातशाह की उच्चता को ही प्रकट किया।

भीषण युद्धों और सैन्य संघर्षों के बीच भी गुरु जी ऊंचे मानवीय आदर्शों का पालन करते रहे। उनकी ओर से शत्रु पर कभी पहले वार नहीं किया जाता था। घायल और निहत्थे शत्रु को मारना उनके सिख सैनिकों के लिए निषिद्ध था। स्त्री, बालक, रोगी, शस्त्रहीन अथवा वृद्ध पर वार करना उनके लिए अधर्म था।

एक पठान सेनापति पैंदे खान के द्वारा विश्वासघात किए जाने के कारण गुरु जी को चौथा युद्ध करना पड़ा। रणभूमि में गुरु जी के साथ युद्ध करते हुए जब वह घायल होकर धराशायी हुआ तो गुरु जी भी घोड़े से नीचे उतर आये। उन्होंने पैंदे खान के घायल सिर को अपनी गोद में ले लिया और मरने से पहले उसे मोक्ष का आशीर्वाद दिया। ऐसे निरवैर योद्धा थे श्री गुरु हरिगोबिंद साहिब जी। इसलिए भाई गुरदास जी ने आपका यशोगान करते कहा है:

दलिभंजन गुरु सूरमा वड जोधा बहु परउपकारी।
(वार १:४८)

सिख धर्म में सेवा का संकल्प

*-स. गुरबख्श सिंघ 'प्यासा'**

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। इस तथ्य के अंतर्गत आदर्श समाज की रचना के लिए चिंतक एवं वैचारिक आदि-काल से ही प्रयत्नशील रहे हैं। इसी चिंतन में आस्तिकता/धर्म का अवलम्बन कारगर सिद्ध हुआ। यहां धर्म का अभिप्राय किसी संप्रदाय विशेष से न होकर उसके मूलभूत अर्थों में लिया गया है अर्थात आध्यात्मिक सरोकार एवं सदाचारक मूल्य।

धर्म एवं सदाचार के बारे में एक उक्ति प्रसिद्ध है कि धर्म के बिना सदाचार जड़-विहीन वृक्ष के समान है और सदाचार के बिना धर्म एक फल-विहीन वृक्ष के समान।

धर्म का मूल एक ऐसी शक्ति से जुड़ा हुआ है जिसके अटल नियमों के तहत सृष्टि का संचालन हो रहा है। इसके अंतर्गत सामाजिक जीवन को व्यवस्थित एवं संतुलित बनाये रखने के लिए सदाचारक नियम गढ़े गये जिन्होंने सभ्याचार को जन्म दिया।

युग-बोध के अनुसार कई धर्म/वाद अस्तित्व में आये। भूगोलिक एवं आर्थिक दृष्टि के अनुसार प्रत्येक धर्म के सदाचारक नियमों में अंतर होना स्वाभाविक था परन्तु मूलभूत नियमों में समानता थी जैसे कि ईश्वर में विश्वास, सत्याचरण, दया, प्रेम आदि। इन सब का निचोड़ है 'सेवा'। भक्ति के नौं रूपों में एक रूप 'सेवा' का भी माना गया है।

वैसे 'सेवा' का शाब्दिक अर्थ है किसी दूसरे के हित में किया गया कार्य। स्वस्थ समाज के निर्माण के लिए 'सेवा' एक आवश्यक तत्व है, इसलिए सेवा का इतिहास बहुत पुराना है। प्राचीन समय में सेवा की भावना अधिक प्रबल थी परन्तु जैसे-जैसे मनुष्य व्यक्तिवादी होता गया, सेवा की भावना लुप्त होती गयी।

वर्ण-व्यवस्था में तो एक-दूसरे की सेवा करने का प्रश्न ही नहीं उठता था क्योंकि समाज में उच्च/हीन भावना व्याप्त थी। बौद्ध मत के आगमन से सेवा की भावना का संचार हुआ परन्तु कालांतर में पूर्व-व्यवस्था हावी होने पर यह भावना क्षीण होती गयी।

सिख धर्म के आगमन से स्थिति पुन: बदल गयी। उसने जात-पात का निषेध करते हुए सामाजिक बराबरी पर बल दिया जो इस सर्वमान्य तथ्य पर केन्द्रित था कि 'जब कि सर्वस्व का रचियता एक ईश्वर ही है और सब मनुष्य उसकी संतान हैं तो फिर जात-पात, ऊंच-नीच, लिंग-भेद के आधार पर भेदभाव क्यों?'

क्योंकि ईश्वर सर्वव्यापक है, इसलिए मनुष्यता की सेवा ईश्वर की सेवा है। तभी तो सिख धर्म में 'सेवा और सुमिरन' के दो स्तंभ समानांतर रूप में साथ-साथ खड़े हैं और इनमें कोई अंतर ही नहीं रहा।

सिख धर्म में सेवा दो अर्थों में ली गयी है। गुरु की सेवा एवं संगत की सेवा।

जब दसवें गुरु श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने देह-प्रथा को विराम देकर श्री गुरु ग्रंथ साहिब जी को 'शब्द गुरु' के रूप में सुशोभित कर दिया

**२२, प्रभु पार्क सोमायटी, ओल्ड छानी रोड, वडोदरा-२। फोन- ६५५४३९१.*

तो संगत की सेवा केन्द्र-बिन्दु बन गयी।

गुरु साहिबान ने सेवा का उपदेश कथनी द्वारा ही नहीं अपितु अपने जीवन में अमली रूप में चरितार्थ किया। इतिहास साक्षी है कि दूसरे गुरु श्री गुरु अंगद देव जी, तीसरे गुरु श्री गुरु अमरदास जी एवं चौथे गुरु श्री गुरु रामदास जी ने मुख्य रूप में गुरु-घर के निमाणे सेवक के रूप में 'सेवा' की कसौटी पर खरे उतर कर गुरुता-पद प्राप्त किया था। इसीलिए गुरु साहिबान द्वारा प्रवाहित 'सेवा' रूपी सरिता निर्बाध रूप में समर्पित सच्चे सिखों में बहती रही है और बहती रहेगी। श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी तो उस सिख को न होने के समान मानते हैं जिस सिख के मन में सेवा की भावना नहीं जागी।

मुख्य रूप में 'सेवा' दो प्रकार की मानी गयी है— (१) मन से (२) तन से

मन से प्रभु का सुमिरन और तन से संगत/मानवता की सेवा। मुख्य उद्देश्य जीवन को प्रभु की इच्छानुसार ढालना। गुर-उपदेश है:

अनिक भांति करि सेवा करीऐ ॥
जीउ प्रान धनु आगै धरीऐ ॥ (पन्ना ३९१)

गुरबाणी के व्याख्याकार महाकवि भाई गुरदास जी का कथन है:

विणु सेवा ध्रिगु हथ पैर होर निहफल करणी।
(वार २७:१०)

अर्थात सेवा-विहीन हाथों-पांवों पर धिक्कार है। सेवा के सिवाय अन्य सब कर्म फलहीन हैं।

सेवा विविध प्रकार की हो सकती है, जैसे सतसंग के लिए आई संगत के जोड़ों की संभाल; गुरु के लंगर में तन, मन और धन से सेवा; जैसे भोजन-सामग्री चढ़ाना, लंगर पकाना, लंगर बांटना, जल छकाना और जूठे बर्तन साफ करना आदि।

अपने अहम या हउमै से छुटकारा पाने के लिए सेवा से बढ़ कर और दूसरा कोई साधन नहीं है। परन्तु आजकल अधिकतर देखने में आता है कि कथित सेवक, अपने द्वारा तन और धन से की गयी सेवा पर गर्व करके, अपने आप को विलक्षण मानने लगता है। वह यह भूल जाता है कि उसका अपना क्या है, जो किसी दूसरे को देगा!

सेवा का दूसरा अर्थ है, आत्म-समर्पण और प्रेमपूर्ण व्यवहार। सत्य तो यह है कि सच्चे सेवक में वह दिव्य दृष्टि पैदा हो जाती है कि उसे सब में ईश्वर की ज्योति दिखाई देने लगती है। फिर न कोई वैरी रहता है न बेगाना। सब अपने मीत लगने लगते हैं।

इस संदर्भ में श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के जीवन-काल में से एक घटना प्रेरणादायक है।

रण-भूमि में एक सिख भाई घनईया जी (कन्हैया जी) को सिख सैनिकों को जल पिलाने का कार्य सौंपा गया। सिखों ने जब यह देखा कि भाई घनईया जी सिखों के साथ-साथ जख्मी मुसलमान सैनिकों को भी जल पिला रहे हैं तो सिखों ने इस बात की शिकायत गुरु जी से की। जब इसके बारे में गुरु जी ने भाई घनईया जी से पूछा तो उन्होंने सहजता से उत्तर दिया कि उन्हें तो सब में आप ही की छवि दिखाई देती है। उनके इस उत्तर से गुरु जी बहुत प्रसन्न हुए और प्रेमपूर्वक एक मलहम की डिबिया देकर कहा कि जब तुम जख्मियों को जल पिलाओ तो इसके साथ-साथ उनके जख्मों पर यह मलहम भी लगा दिया करना। यह है समर्पित सेवक के लक्षण और गुरु की दृष्टि की विशालता, तभी तो *'मानस की जात सबै एकै पहिचानबो'* की भावना साकार हो सकेगी।

जहां सिख गुरु साहिबान ने अपने सिखों के अंदर सेवा के बीज बोने के लिए स्वयं संगत

की सेवा अपने हाथों से करके, सेवा के महत्त्व को उजागर किया वहीं गुरु-सुपत्नियों ने भी उनका साथ दिया। जैसे श्री गुरु अंगद देव जी की सुपत्नी माता खीवी जी ने गुरु के लंगर की व्यवस्था पूरे तन-मन के साथ सुचारू रूप से निभाई थी। स्वादिष्ट भोजन के साथ उनका ममतामयी व्यवहार एक प्रकार के अद्भुत आनंद की अनुभूति प्रदान करता था। यह है आदर्श सेवा की बानगी। इसी प्रकार श्री गुरु अरजन देव जी की सुपत्नी माता गंगा जी, गुरु जी के दर्शनार्थ आई संगत की सेवा करने में गुरु जी का साथ देती थीं।

'गरीबी गदा हमारी' के गुर-उपदेश को आत्मसात करते हुए अनेक सिखों ने इसे शिरोधार्य किया, जैसे कि जत्थेदार कपूर सिंघ जी ने **'नवाब'** की पदवी इस शर्त पर स्वीकार की थी कि उनसे संगत को पंखा करने की सेवा, जो वे अब तक करते आ रहे हैं, नवाब बनने के बाद भी उन्हें यथावत करने दी जायेगी। पुरातन सिखों में यह भावना अपने पूरे ओज में विद्यमान थी।

ऐसा ही एक उदाहरण शेर-ए-पंजाब महाराजा रणजीत सिंघ से संबंधित है। उनका प्रजा-वत्सल का गुण तो दंत-कथाओं का रूप ले ही चुका था। उन्होंने धर्म-स्थानों को मुक्त-हस्त से दान दिया था। इसी प्रकार श्री हरिमंदर साहिब, अमृतसर में संगमरमर, स्वर्ण आदि भेंट किया, परन्तु अभिमान लेश मात्र भी नहीं। साक्षी है श्री हरिमंदर साहिब के मुख्य द्वार पर लगी पट्टिका जिसमें ये शब्द अंकित हैं**—'सतिगुरु ने परम सेवक जाण के सेवा कराई।'** भावार्थ**—** यह सेवा मैंने नहीं की, सतिगुरु ने कृपा करके आप करवाई है। यह है निराभिमानता की रौशन मिसाल। सेवा वही सफल है जो बिना किसी प्रतिकार की इच्छा से की जाये, जो बिना किसी भेद-भाव के की जाये।

सेवा करते समय दूसरे पक्ष को यह महसूस न हो कि उस पर कोई उपकार किया जा रहा है बल्कि सेवा करने वाले को यह मान कर चलना चाहिए कि वह व्यक्ति, उसे सेवा का अवसर देकर उस पर एक तरह का उपकार कर रहा है। सेवा का अवसर प्राप्त होना, प्रभु की अनुकम्पा है। गुरबाणी इस तथ्य की ओर स्पष्ट संकेत करती है:

सेवकु अपनी लाइओ सेव ॥ (पन्ना ८०१)

जो इस तथ्य को हृदयंगम कर लेता है वह श्री गुरु अरजन देव जी द्वारा रचित बाणी सुखमनी साहिब में उनके द्वारा दर्शाये सेवा के महत्त्व का मर्म जानकर अपने आप को धन्य मानता है क्योंकि सेवा के मार्ग पर चलकर मनुष्य परमपद/ईश्वर को भी पा लेता है। गुरु-वाक्य है:

—सेवक कउ सेवा बनि आई ॥
हुकमु बूझि परम पदु पाई ॥ (पन्ना २९२)
—सेवा करत होइ निहकामी ॥
तिस कउ होत परापति सुआमी ॥ (पन्ना २८६)

परन्तु यह मार्ग कथनी में जितना सरल लगता है करनी में उतना ही कठिन है। जब तक मनुष्य अपने अहम का त्याग नहीं करता, उसमें प्रेमाभाव हिलोरे नहीं लेता, उसके अंदर समर्पण की भावना पैदा नहीं होती, वह कर्म और कुछ भी हो परन्तु सेवा नहीं कहा जा सकता। प्राय: देखा-देखी एवं मजबूरी से की सेवा, सेवा नहीं मात्र ढोंग है। सत्य तो यह है कि हमें मनुष्य का जीवन मानवता की सेवा के लिए ही मिला है। सिख का दूसरा नाम ही सेवा है क्योंकि वह **'सरबत्त के भले'** के लिए प्रतिबद्ध है।

कविता

मां

–डॉ. दादूराम शर्मा 'कोविद'*

'मैं हूं एक अनेक बन, करूं सृष्टि-विस्तार।'
ब्रह्म का संकल्प यह, मां करती साकार।
जननी के ही उदर में, लेते सब आकार।
दे अस्तित्व ला जगत में, पाले कर-कर प्यार।
इस धरती के पुत्र जब, भूले मां-सम्मान।
बाबे कहा,
'सो किउ मंदा आखीऐ जितु जंमहि राजान ॥'
मां ही जग का मूल है, मां जग का आधार।
मां से ही होता सतत, अग-जग का विस्तार।
अमृत मां के दूध में, उर में प्यार अपार।
स्वर्गिक सुख है गोद में, चरण मुक्ति के द्वार।
अमृतोपम 'मां' शब्द की, सुधा-सिक्त झंकार।
छेड़ें श्रद्धा-भक्ति-रस, मन-वीणा के तार।
मां! तेरा ऋण बच्चे तेरे, सकते नहीं उतार।
जिन पर हैं तूने किए, कोटि-कोटि उपकार।
सुन्दर तन-मन प्राण दे, दिए दिव्य संस्कार।
रोम-रोम में रम रहा, मां का तरलित प्यार।
वात्सल्य-रस से भरा, मां तेरा शुचि नाम।
पद-पदमों में राजते, पावन चारों धाम।
वात्सल्य, करुणा, दया, क्षमा, तपस्या, त्याग।
मातृ-हृदय में दिव्य गुण, भरे सहित अनुराग।
मां बन मां का नारियां, देतीं कर्ज उतार।
पर नर पर प्रति जन्म में, चढ़ता जाता भार।
चढ़ता जाता भार पिता बन, क्या शतांश[१] भी।
कर सकता वह ऋण-शोधन,[२] मां का कहीं कभी?
भू को स्वर्ग, स्वर्ग को परमधाम-सा पावन।
युग-युग में हे पुण्यमयी, करती तुम मां बन।
धरती से भी धैर्यमयी क्षमाशील सहिष्णु[३]।
मां का शुचि व्यक्तित्व है, वन्दनीय वर्धिष्णु[४]।
नर को गौरव पिता का, मां से मिला महान्।
किन्तु कृतघ्न इस तथ्य को, कहां रहा अब मान?
मां से चलता आ रहा, सतत् सृष्टि का चक्र।
कन्या-भ्रूण-विनाश का, उसे लीलता नक्र[५]।
उसे लीलता नक्र, यदि होगी न कन्या।
होगी मानव जाति कहां, फिर धरती धन्या ?
बिना मूल के हो सकता है, पेड़ कहां से ?
हुआ अनादि-अनन्त जगत् का, उद्गम मां से।
बहुधा होते आ रहे, जग में पूत-कपूत।
किन्तु कुमाता के हुए, उदाहरण न प्रभूत[६]।
जग के शासन का रहे, मां के हाथों भार।
'प्रेम-राज्य' हो लुप्त हों, घृणा-द्वेष-संहार।
क्यों करते हो क्रूर जन! वधुओं का संहार?
जननी बन ये करेंगी, इस जग का विस्तार।
नारी शोभा सृष्टि की, सृजन-स्नेह का मूल।
खिलते इसके अंक में, सुन्दर सुरभित फूल।
विधि की रचना-कुशलता, त्याग-तपस्या-सार।
माता, मृदुता, क्षमा, दया, सुन्दरता साकार।

१. सौवां हिस्सा
२. कर्ज उतारना
३. सहनशील
४. बढ़ने वाला
५. घड़ियाल, मगरमच्छ
६. अधिक, प्रचुर

*प्राध्यापक, महाराज बाग, भैरोगंज, सिवनी (म. प्र.)-४८०६६१

गुरबाणी राग परिचय-११

रागु वडहंसु

*-स. कुलदीप सिंघ**

श्री गुरु ग्रंथ साहिब में रागु वडहंस की बाणी राग क्रमांक ८ पर, ३८ पृष्ठों (५५७-५९४) में अंकित है। गुरमति संगीत पद्धति में वडहंस राग को महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। गुरु साहिबान ने इस राग का प्रयोग शास्त्रीय संगीत और लोक-धुनों दोनों के लिए किया है। इस राग के सीमित आकार में छंदों में रचित बाणी का विशेष चयन है तथा लोक-धुनों पर आधारित घोड़ीआं और अलाहणीआं केवल इसी राग में हैं। संगीताचार्यों ने वडहंस राग का वर्गीकरण खामाज थाट में किया है। इस राग के नादात्मक स्वरूप में निषाद के दोनों रूप और अन्य सभी स्वर शुद्ध लगते हैं। इस राग का गायन समय दोपहर का है।

राग वडहंस के प्रथम शब्द में श्री गुरु नानक देव जी ने प्रेम-भक्ति की तीव्रता का वर्णन किया है। परमेश्वर से जिसे प्रेम होता है उसे सब कुछ अच्छा लगता है। उसकी दशा समरस और शांत होती है। उसमें व्याकुलता नहीं होती है। इसके विपरीत नशा करने वाले व्यक्ति में नशे के लिए तथा मछली को जल के लिए व्याकुलता होती है। प्रभु के नाम में अनुरक्त व्यक्ति नाम पर बलिहार होता है। प्रभु का नाम सुंदर फल वाला वृक्ष है। जिन्होंने उस नाम रूपी फल का अमृत-रस पीया है उन तृप्त लोगों पर मैं बलिहार जाता हूं। हे प्रभु! तुम सभी के साथ निवास करते हो, मुझे क्यों नहीं नजर आते? मुझ तृषित की प्यास कैसे बुझ सकती है क्योंकि मेरे और अमृत सरोवर के बीच अहंकार की दीवार है! हे प्रभु! तुम ही व्यापारी हो और तुम ही मेरी पूंजी हो। मेरा संशय तभी दूर होगा जब तुमसे प्राप्त नाम-धन की पूंजी से मैं प्रार्थना और तुम्हारा गुण-कीर्तन करूंगा।

प्रभु से विछोड़े का दूसरा चित्र गुरु नानक साहिब के तीसरे शब्द में है। प्रभु से मिलन का अवसर मानव जीवन सावन के महीने के रूप में है। प्रभु से सुमिरन की अनहद झंकार मोरों की रुणझुण है। प्रभु के नेत्र आकर्षित करने वाले हैं। जीवात्मा का शृंगार तभी सफल है जब प्रभु को अपने गुणों से रिझा सके। हे मां! मैं कहलाने के लिए व्यवहार पटु हूं जब कि प्रभु को मेरा कोई व्यवहार अच्छा नहीं लगा। मैं कितनी निष्ठुर हूं! विरह के अश्रुओं को जल के समान पी लिया है। प्रभु की प्राप्ति के लिए अहंकार रूपी शीश काट कर देना चाहिए। हम क्यों न अपने प्राण न्यौछावर कर दें जब प्रभु हम से पराया हो गया है:

सीसु वढे करि बैसणु दीजै विणु सिर सेव करीजै ॥
किउ न मरीजै जीअड़ा न दीजै जा सहु भइआ विडाणा ॥ *(पन्ना ५५८)*

श्री गुरु नानक देव जी के भावपूर्ण शब्दों के बाद श्री गुरु अमरदास जी के नौ शब्दों में मन को हरि-नाम-स्मरण का उद्‌बोधन है, अहंकार का नाम से विरोध है। नाम और अहंकार एक स्थान पर नहीं रह सकते।

**सी-१२७, गुरु तेग बहादर नगर, इलाहाबाद-२११०१६*

अहंकार में की गई सेवा भी व्यर्थ है। अहंकार में भक्ति नहीं होती। हउमै जीव का बंधन है:

हउमै विचि भगति न होवई हुकमु न बुझिआ जाइ ॥
हउमै विचि जीउ बंधु है नामु न वसै मनि आइ ॥
(पन्ना ५६०)

राग वडहंस में श्री गुरु नानक देव जी के समान श्री गुरु रामदास जी के ३ शब्द हैं। मेरे प्रेम भरे मन में प्रभु-मिलन की आशा है। मेरे मन में बहुत इच्छा है कि मैं किस प्रकार हरि के दर्शन करूं? श्री गुरु अरजन देव जी के नौ शब्द हैं। अन्तिम शब्द में प्रभु-मिलन की आकांक्षा व्यक्त की गई है जो पूर्ण गुरु से ही संभव है। जिस प्रकार बच्चे को सौ खेल खिलावें तो भी वह दूध के बिना नहीं रह सकता। हे मां! अगर मेरे निकट सौ व्यंजन भी हों तो भी मेरी भूख शांत नहीं होगी। मेरे मन और तन में प्रियतम का प्रेम है। मन को कैसे धैर्य हो?

मेरै अंतरि लोचा मिलण की पिआरे हउ किउ पाई गुर पूरे ॥
जे सउ खेल खेलाईऐ बालकु रहि न सकै बिनु खीरे ॥
मेरै अंतरि भुख न उतरै अंमाली जे सउ भोजन मै नीरे ॥
मेरै मनि तनि प्रेमु पिरंम का बिनु दरसन किउ मनु धीरे ॥ *(पन्ना ५६४)*

राग वडहंस में श्री गुरु अमरदास जी की दो असटपदियां हैं जो मन को सम्बोधित हैं:

मन मेरे साचे नाम विटहु बलि जाउ ॥
(पन्ना ५६४)
मनूआ दह दिस धावदा ओहु कैसे हरि गुण गावै ॥
(पन्ना ५६५)

राग वडहंस में छंदों की कुल संख्या २६ है जो दो क्रमों में अंकित है। पहले क्रम में १५ सामान्य छंद तथा दो घोड़ी छंद हैं। दूसरे क्रम में ९ अलाहणीआं शीर्षक छंद हैं।

सामान्य छंदों में श्री गुरु नानक देव जी के दो छंद हैं तथा अलाहणीआं शीर्षक में पांच छंद हैं। छंद क्रमांक में आठ पद हैं। इस छंद में श्री गुरु नानक देव जी ने शब्द क्रमांक ३ के समान का प्रभु का स्वरूप वर्णन किया है तथा विरह के स्थान पर मिलन का रूपक प्रस्तुत किया है:

तेरे बंके लोइण दंत रीसाला ॥
सोहणे नक जिन लंमड़े वाला ॥ . . .
तेरी चाल सुहावी मधुराड़ी बाणी ॥
कुहकनि कोकिला तरल जुआणी ॥
तरला जुआणी आपि भाणी इछ मन की पूरीए ॥
सारंग जिउ पगु धरै ठिमि ठिमि आपि आपु संधूरए ॥
स्रीरंग राती फिरै माती उदकु गंगा वाणी ॥
बिनवंति नानकु दासु हरि का तेरी चाल सुहावी मधुराड़ी बाणी ॥ *(पन्ना ५६७)*

भावार्थ— हे अरूप प्रीतम! कभी रूपवान होकर भी आओ। हे सुंदरता के सुंदर! तेरे नयन बांके हैं, दांत सुंदर हैं, नाक शोभावान है, केश लम्बे हैं। तेरी चाल मोहक है, वाणी मधुर है, मानो कोकिल कूक रही हो। यौवन उघड़ रहा है। हे प्रीतम! मन की इच्छा पूरी करो। माथे पर सिन्दूर लगाए हाथी के समान प्रेम-रंग में रंगी प्रेमिका गंगाजल के समान पवित्र होकर मस्त चाल से चल रही है। हरि का दास नानक विनयपूर्वक कथन करता है कि तेरी चाल मोहक है तथा वाणी मधुर है।

ऐसा प्रतीत होता है कि अरूप प्रीतम के गुण गाते और रस-स्वाद करते इस शब्द का उच्चारण वर्षा की मीठी फुहार के समान हुआ है। सुरति मण्डल से सत्य-स्वरूप प्रभु की सूरत

मूर्तिमान होकर रसना पर आ विराजी है। दासों के दास नानक इस अवस्था *"जपहु तुसी सहेलीओ"* कहकर विस्मय में लीन हो जाते हैं।

छंदों के प्रथम क्रम में श्री गुरु अमरदास जी के छ: छंद हैं। तृतीय छंद में सत्य के सुमिरन का उपदेश है। यह खजाना मनुष्य के अंदर है। उस खजाने की वस्तु बाहर मत खोज।

चौथे छंद में रत्न पदार्थ के व्यापार करने का निर्देश है। प्रभु के दरबार में खोटे और खरे की परीक्षा होगी:

खोटे खरे सभि परखीअनि तितु सचे कै दरबारा राम ॥ *(पन्ना ५७०)*

पांचवें छंद के दूसरे पद में अहंकार और माया की मैल त्याग कर मन निर्मल करके गुरमति के अनुसार हरि-रस पीने का संदेश है। हरि-रस पीने और सत्य शब्द पर विचार से अंत:करण रसमयी होगा। मन में अमृत से भरा एक कूप है जिसे सुरति रूपी पनिहारन शब्द के द्वारा पीती है। जिह्वा से राम-नाम का वही जाप करता है जिस पर प्रभु की कृपा होती है। नाम के रंग में मन निर्मल होता है, अन्यथा अन्य मन अहंकार की मैल से भरे रहते हैं:

हंउमै माइआ मैलु है माइआ मैलु भरीजै राम ॥
गुरमती मनु निरमला रसना हरि रसु पीजै राम ॥
रसना हरि रसु पीजै अंतरु भीजै साच सबदि बीचारी ॥
अंतरि खूहटा अंम्रिति भरिआ सबदे काढि पीऐ पनिहारी ॥
जिसु नदरि करे सोई सचि लागै रसना रामु रवीजै ॥
नानक नामि रते से निरमल होर हउमै मैलु भरीजै ॥ *(पन्ना ५७०)*

छंदों के प्रथम क्रम में श्री गुरु अमरदास जी के छ: छंदों के बाद श्री गुरु रामदास जी के छ: छंद हैं। प्रथम चार छंद एक विशेष शैली में रचित हैं तथा अंतिम दो छंद 'घोड़ीआं' शीर्षक के अन्तर्गत हैं।

विशेष शैली में रचित छंदों में प्रत्येक छंद में चार पद हैं और प्रत्येक पद में छ: पंक्तियां हैं। प्रथम दो पंक्तियों में आरम्भिक शब्द समूह को दोहराया गया है। फिर तृतीय पंक्ति में द्वितीय को आधार बना कर विषय प्रतिपादन किया गया है। अगली दो पंक्तियों में मुख्य विषय है और अंतिम पंक्ति में प्रथम पंक्ति को दोहरा कर समर्थन है। उदाहरणस्वरूप छंद दो का तृतीय पद इस प्रकार है:

हंउ वारी हंउ वारी गुरसिख मीत पिआरे राम ॥
हरि नामो हरि नामु सुणाए मेरा प्रीतमु नामु अधारे राम ॥
हरि हरि नामु मेरा प्रान सखाई तिसु बिनु घड़ी निमख नही जीवां ॥
हरि हरि क्रिपा करे सुखदाता गुरमुखि अंम्रितु पीवां ॥
हरि आपे सरधा लाइ मिलाए हरि आपे आपि सवारे ॥
हंउ वारी हंउ वारी गुरसिख मीत पिआरे ॥
(पन्ना ५७३)

घोड़ी के छंदों में मानव शरीर को घोड़ी का रूप दिया गया है, जिसमें मुख में गुरु उपदेश की लगाम है। लगाम मानो हाथी के सिर पर अंकुश है।

सामान्य छंदों के क्रम में श्री गुरु अरजन देव जी के तीन छंद हैं। द्वितीय छंद के प्रत्येक पद में एक-एक श्लोक है। "मैंने सामान्य दृष्टि से प्रभु के प्रकाश को देखा है किन्तु मेरी प्यास नहीं बुझी। वे नेत्र दूसरे ही हैं जिनसे मेरे प्रियतम का दीदार होता है।"

लोइण लोई डिठ पिआस न बुझै मू घणी ॥
नानक से अखड़ीआं बिअंनि जिनी डिसंदो मा पिरी ॥ (पन्ना ५७७)

सामान्य छंदों के बाद नौ छंद अलाहणीआं शीर्षक के अन्तर्गत हैं जिनमें प्रथम पांच श्री गुरु नानक देव जी द्वारा रचित हैं और अन्तिम चार श्री गुरु अमरदास जी द्वारा रचित हैं। अलाहणी शब्द का मूल संस्कृत शब्द आलापनं है जिसका अर्थ राग के स्वरों का विस्तार करना है। पंजाब में अलाहणी का प्रयोग मृत्यु के समय शोक प्रकट करने के लिए होता है। श्री गुरु नानक देव जी संसार की क्षणभंगुरता दर्शाते हैं। अलाहणी क्रमांक ३ एक असटपदी के रूप में है। गुरु के मिलन से जीवात्मा का स्वभाव बदल गया और सत्य का प्रेम ही उसका शृंगार हो गया। हे सखियो! आओ, सृजनहार का स्मरण करो। नाम के द्वारा ही स्त्री सुहागिन बनती है। विरह का शोक गीत छोड़ कर उसके स्थान पर ब्रह्म-विचार करो:

गुरि मिलिऐ वेसु पलटिआ सा धन सचु सीगारो ॥
आवहु मिलहु सहेलीहो सिमरहु सिरजणहारो ॥
बईअरि नामि सुोहागणी सचु सवारणहारो ॥
गावहु गीतु न बिरहड़ा नानक ब्रहम बीचारो ॥
(पन्ना ५८१)

श्री गुरु अमरदास जी ने अपने अलाहणी छंदों में ब्रह्म विचार का क्रम जारी रखा है। गुणवंती प्रभु के गुणों का स्मरण करती है, उसे कभी कन्त से वियोग नहीं होता। अवगुणवन्ती प्रीतम को नहीं जानती और माया में ठगी जाकर रोती है। अंजान स्त्री वैसे ही भूली फिरती है। वह द्वैत भाव से विधवा हुई बैठी है। यह शरीर जर्जर गगरी है जो मौत की ठोकर से टूट जाता है। यदि इसे गुरु अपना लेता है तो यह माया जाल से निकल कर सत्य में समा कर कंचन हो जाता है:

भ्रमु माइआ विचहु कटीऐ सचड़ै नामि समाए ॥ . .
कांइआ कंचनु तां थीऐ जा सतिगुरु लए मिलाए ॥
(पन्ना ५८५)

राग वडहंस में श्री गुरु रामदास जी द्वारा रचित वार में २१ पउड़ी छंद हैं। उनके साथ ४० श्लोक श्री गुरु अमरदास जी के तथा तीन श्लोक श्री गुरु नानक देव जी के संलग्न हैं। पउड़ी के प्रत्येक छंद में हरि-नाम और हरि-कीर्ति का वर्णन है:

हरि इको दाता सेवीऐ हरि इकु धिआईऐ ॥
हरि इको दाता मंगीऐ मन चिंदिआ पाईऐ ॥ . .
गुरसिखां मनि हरि प्रीति है गुरु पूजण आवहि ॥
हरि नामु वणंजहि रंग सिउ लाहा हरि नामु लै जावहि ॥ (पन्ना ५९०)

श्री गुरु अमरदास जी के श्लोकों में सतिगुरु-सेवा का संदेश है। सतिगुरु-सेवा के बिना मानव अपना जीवन व्यर्थ गंवा रहे हैं।

सतिगुरु को देखना मात्र सेवा नहीं है उसके लिए शब्द पर विचार करना आवश्यक है:

सतिगुर नो सभु को वेखदा जेता जगतु संसारु ॥
डिठै मुकति न होवई जिचरु सबदि न करे वीचारु ॥ (पन्ना ५९४)

शाब्दिक व्याख्या के अनुसार वडहंस का अर्थ महान आत्मा या परमहंस के रूप में किया गया है। वही परम-तत्व महापुरुष है जिसने सत्य नाम को हृदय में धारण किया है। वे सत्य का संग्रह करते हैं, सत्य में निवास करते हैं और सत्य-नाम के प्रेमी हैं:

सबदि रते वड हंस है सचु नामु उर धारि ॥
सचु संग्रहहि सद सचि रहहि सचै नामि पिआरि ॥ (पन्ना ५८५)

गुरबाणी चिंतनधारा-२२

जापु साहिब की विचार व्याख्या

*-डॉ. मनजीत कौर**

नमसत्वं अकाले ॥ नमसत्वं अपाले ॥
नमो सरब देसे ॥ नमो सरब भेसे ॥६६॥

हे प्रभु! तुझे नमस्कार है। तुझे काल अर्थात् मौत भी छू नहीं सकती। तुझे किसी की मोहथाजी नहीं क्योंकि तेरे पालन-पोषण हेतु किसी की भी सहायता की आवश्यकता नहीं पड़ती। हे समस्त देशों में व्यापक प्रभु! तुझे नमस्कार है। सारी दुनिया के पहरावे तेरे ही पहरावे हैं। वस्तुत: वह मालिक सब देशों में मौजूद है, सर्वत्र में समाया हुआ है, उसके बिना बाहर या आन्तरिक किसी भी जीव का कोई अस्तित्व नहीं है।

नमो राज राजे ॥ नमो साज साजे ॥
नमो शाह शाहे ॥ नमो माह माहे ॥६७॥

हे करतार! तुझे नमस्कार है। तू सब राजाओं का राजा है। हे बादशाहों के बादशाह! तू सम्पूर्ण सृष्टि का सृजक है। हे सृजनहार प्रभु! तुझे नमस्कार है। तू चन्द्रमों का भी चन्द्रमा है अर्थात् चन्द्रमा को भी शीतल चांदनी देने वाला तू ही है, चन्द्रमा भी तुझसे ही रोशन है।

बादशाहों के बादशाह उस परमात्मा के सन्दर्भ में गुरदेव के चिन्तन को शेख फरीद जी ने उसी परमात्मा (खुदा) की चाकरी करने की सबसे अपील की है, यथा:

फरीदा साहिब दी करि चाकरी दिल दी लाहि भरांदि ॥
दरवेसां नो लोड़ीऐ रुखां दी जीरांदि ॥
(पन्ना १३८१)

शेख फरीद जी भी बादशाहों के बादशाह की चाकरी करने का उपदेश दे रहे हैं। एक बार शेख फरीद जी लोक-कल्याणकारी कार्यों हेतु किसी बादशाह के दरबार में मदद मांगने गए। आगे बादशाह खुदा की इबादत में लगा था। कुछ समय इंतजार करते हुए शेख जी ने उस बादशाह को खुदा से कुछ मांगते देखा तो स्वयं उठ कर महल से बाहर आ गए। जब बादशाह को पता चला कि एक फकीर आया और बिना कुछ मांगे चला गया तो उसने सेवकों को भेज कर उनको वापिस बुलवाया। शेख फरीद जी जब वापिस महल पहुंचे तो बादशाह ने पूछा, फकीर जी! आप आए भी और बिना कुछ मांगे चले भी गए, कहो क्या चाहिए? बाबा फरीद जी ने जो जवाब दिया वह कलयुगी जीवों का मार्ग प्रशस्त करने वाला था। उन्होंने कहा, "यहां आना मेरी भूल थी। जब मैंने एक बादशाह को हाथ फैला कर खुदा से मांगते देखा तो मैंने सोचा कि मैं भी क्यों न उस बादशाहों के बादशाह 'खुदा' से ही मांगू जो सबको दातें बख्शने वाला है!"

एक आम धारणा है—*"दाते दे दर तों मंग लै, दर-दर तों मंगना छड्ड दे।"* वस्तुत: 'राजा' वह है जो 'रज़' गया हो अर्थात् तृप्त हो गया हो, जिसकी कोई मांग शेष न रह गई हो। अत: स्पष्ट है कि वह परमात्मा ही सब राजाओं का राजा है।

नमो गीत गीते ॥ नमो प्रीत प्रीते ॥
नमो रोख रोखे ॥ नमो सोख सोखे ॥६८॥

**२/१०४, जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४*

हे वाहिगुरु! तुझे नमस्कार है। गुरदेव फरमान करते हैं, हे परवरदिगार! तू एक मनमोहक (महा सुंदर) गीत है, जो सबको अपनी ओर आकर्षित कर रहा है। तू सर्वोच्च प्रेम-स्वरूप है अर्थात् महान प्यार का अथाह सागर है। तू अति भयानक क्रोध-स्वरूप भी है (सम्पूर्ण सृष्टि तेरे डर में चल रही है) तू सबसे बड़ा नाशकर्ता भी है। गुरबाणी में अन्यत्र भी परमेश्वर को भय-रहित हस्ती के रूप में रूपायित किया गया है। आसा की वार में श्री गुरु नानक देव जी ने इस सच्चाई को विविध उदाहरणों से स्पष्ट किया है कि सृष्टि में ईश्वर को छोड़ कर प्रत्येक जीव तथा कुदरत की प्रत्येक शक्ति प्रभु के ही भय में कार्यरत है अर्थात उसी के डर में कार्य कर रही है, यथा:

भै विचि पवणु वहै सदवाउ ॥
भै विचि चलहि लख दरीआउ ॥
भै विचि अगनि कढै वेगारि ॥
भै विचि धरती दबी भारि ॥
भै विचि इंदु फिरै सिर भारि ॥
भै विचि राजा धरम दुआरु ॥
भै विचि सूरजु भै विचि चंदु ॥
कोह करोड़ी चलत न अंतु ॥
भै विचि सिध बुध सुर नाथ ॥
भै विचि आडाणे आकास ॥
भै विचि जोध महाबल सूर ॥
भै विचि आवहि जावहि पूर ॥
सगलिआ भउ लिखिआ सिरि लेखु ॥
नानक निरभउ निरंकारु सचु एकु ॥
(पन्ना ४६४)

वस्तुत: सदैव स्थिर प्रभु ही भय से पूरी तरह मुक्त है। गुरबाणी में इस तथ्य को भी अच्छी तरह समझाया गया है कि उस प्रभु के भय के बिना भक्ति नहीं हो सकती:

भै बिनु भगति न होवई नामि न लगै पिआरु ॥
(पन्ना ७८८)

नमो सरब रोगे ॥ नमो सरब भोगे ॥
नमो सरब जीतं ॥ नमो सरब भीतं ॥६९॥

गुरदेव फरमान करते हैं कि हे परमात्मा! तू सभी जीवों की मौत का कारण है। तू सब जीवों में रचा-बसा है अर्थात् सब में समाया हुआ है। तू ही दुनिया के समस्त पदार्थों को भोगने वाला है अर्थात् तू सबसे बड़ा भोगी है। हे प्रभु! तू सब पर विजय पाने वाला है। अपने आप को अति बलवान, सर्वशक्तिवान समझने व कहलवाने वाला भी तुझसे टक्कर नहीं ले सकता अर्थात् तुझसे कोई जीत नहीं सकता। समस्त ताकतें तेरे अधीन हैं। समस्त जीव तेरे भय में हैं। तेरे इस निर्भय-स्वरूप को भी गुरदेव का नमस्कार है।

नमो सरब गिआनं ॥ नमो परम तानं ॥
नमो सरब मंत्रं ॥ नमो सरब जंत्रं ॥७०॥

तू सर्वज्ञ है, सब कुछ जानने वाला है। सम्पूर्ण ज्ञान तुझ में ही समाया है। तू अन्तरयामी है। तू सब जीवों के दिलों की जानने वाला है। तू परम तान अर्थात् तू जगत-रूप अत्यन्त विस्थार वाला है। संसार की व्यापकता तेरे ही कारण है, तेरे ही द्वारा है। उसके एक हुक्म से सारा संसार रच गया, उसके एक हुक्म से ही लाखों दरिया बन गए, यथा:

कीता पसाउ एको कवाउ ॥
तिस ते होए लख दरीआउ ॥ (पन्ना ३)

आगे गुरदेव उस मालिक के सबको वश करने वाले रूप को नमस्कार करते हैं। हे प्रभु! तू समस्त जीवों को वश में करने वाला महान मंत्र है। तू ही सबको वश में करने वाला महान यंत्र (साधन) है। हे वाहिगुरु! तेरा नाम ही सबके लिए वशीकरण मंत्र है।

नमो सरब द्रिस्सं ॥ नमो सरब क्रिस्सं ॥
नमो सरब रंगे ॥ त्रिभंगी अनंगे ॥७१॥

हे समस्त जीवों को अपनी निगरानी में रखकर सबका ध्यान रखने वाले प्रभु! तुझे नमस्कार है। सब जीवों को अपनी ओर आकर्षित करके अपने में ही समेटने वाले वाहिगुरु तुझे नमस्कार है। हे समस्त रंगों में रंगे हुए प्रभु! अर्थात सब में मौजूद सभी रंगों में निवास करने वाले करतार! तुझे नमस्कार है। हे ईश्वर! तू तीनों भवनों अर्थात तीनों लोकों आकाश, पाताल एवं मातलोक को नष्ट करने वाला एवं अंगों से रहित है। जैसे कि सभी जीवों के अंग हैं पर तू शरीर-रहित है। तेरा कोई अंग विशेष नहीं है अर्थात तू सब शरीरों में विद्यमान होते हुए भी स्वयं शरीर-रहित है।

नमो जीव जीवं ॥ नमो बीज बीजे ॥
अखिज्जे अभिज्जे ॥ समसतं प्रसिज्जे ॥७२॥

हे प्रभु! तु सब जीवों की उत्पत्ति तथा जीवन का मूल कारण है, सभी में बीज रूप में विद्यमान है तथा सारी रचना तुझसे ही मुमकिन है। तेरे बिना किसी के जीवन की कल्पना भी नहीं हो सकती। नमस्कार है तेरे अखिज्जे स्वरूप को अर्थात जिस पर किसी द्वारा रोब न डाला जा सके अर्थात जिसे कोई दबा नहीं सकता। अभिज्जे अर्थात जिसका वर्गीकरण न किया जा सके, जिसे किसी तरह बांटा न जा सके अर्थात तेरी शक्ति का कोई बंटवारा नहीं कर सकता, न ही तुझे किसी तरह से खंडित किया जा सकता है। तू सब जीवों पर रहमतें, बख्शिशें करने वाला तथा सबको अपनी कृपा-दृष्टि से प्रसन्न करने वाला है।

निष्कर्षत: वह परमात्मा ही सबकी उत्पत्ति का मूल कारण है और सभी में वही समाया हुआ है। गुरबाणी में अनेक स्थानों पर इसी भाव को दर्शाया गया है, यथा:

तूं घट घट अंतरि सरब निरंतरि जी हरि एको पुरखु समाणा ॥ *(पन्ना ११)*

क्रिपालं सरूपे कुकरमं प्रणासी ॥
सदा सरबदा रिधि सिधं निवासी ॥७३॥

हे विलक्षण कृपालु प्रभु! तू बुराइयों का समूल नाश करने वाला है। सभी रिद्धियां-सिद्धियां सदा तेरे में ही निवास करती हैं। तू समस्त आत्मिक शक्तियों का घर है।

चरपट छंद ॥ त्व प्रसादि ॥
अंम्रित करमे ॥ अंम्रित धरमे ॥
अखल्ल जोगे ॥ अचल्ल भोगे ॥७४॥

उपरोक्त बंद श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने 'चरपट' छंद में उस मालिक की कृपा से रचा है। गुरदेव फरमान करते हैं कि हे वाहिगुरु! तेरे काम अटल अर्थात् सदा कायम रहने वाले हैं। तेरी मर्यादा का निर्वाह बिना किसी विघ्न के चल रहा है। तेरे कानून में दखलंदाजी करके कोई उसमें रुकावट नहीं डाल सकता। तू सारे संसार में एकरस व्यापक है अर्थात तू सारे जगत से जुड़ा हुआ है। तेरा राज सदैव कायम है। तू सम्पूर्ण योगी तथा भोगी भी है।

उस ईश्वर के सदा अटल रहने वाले कानूनों तथा मर्यादा एवं नियमों का श्री गुरु नानक देव जी ने भी 'आसा की वार' में बड़ा सुंदर वर्णन किया है, यथा:

सचे तेरे खंड सचे ब्रहमंड ॥
सचे तेरे लोअ सचे आकार ॥
सचे तेरे करणे सरब बीचार ॥
सचा तेरा अमरु सचा दीबाणु ॥
सचा तेरा हुकमु सचा फुरमाणु ॥
सचा तेरा करमु सचा नीसाणु ॥
सचे तुधु आखहि लख करोड़ि ॥
सचै सभि ताणि सचै सभि जोरि ॥
सची तेरी सिफति सची सालाह ॥
सची तेरी कुदरति सचे पातिसाह ॥
नानक सचु धिआइनि सचु ॥
जो मरि जंमे सु कचु निकचु ॥ (पन्ना ४६३)

वस्तुतः समूचे रूप में यह सारी कुदरत उसका एक अटल प्रबंध है, परन्तु इसके भीतर के अलग-अलग पदार्थ, जीव-जन्तुओं के शरीर आदि नाशवान हैं। जो उसको स्मरण करते हैं वे उसका ही रूप हो जाते हैं।

अचल्ल राजे ॥ अटल्ल साजे ॥
अखल्ल धरमं ॥ अलक्ख करमं ॥७५॥

हे वाहिगुरु! तेरा राज अटल है अर्थात् सदा कायम रहने वाला है। तेरी रचना सदा कायम रहने वाली है। तेरा कानून मुकम्मल अर्थात पूर्ण है। कहने का अभिप्राय, तेरे बनाए कानून में किसी तरह की कोई कमी नहीं। यहां दुनिया में जो नियम-कानून बनते हैं उनमें कभी संशोधन किया जाता है, कभी उसे पूर्णतया रद्द भी कर दिया जाता है, उनमें अपूर्णता बनी रहती है, किन्तु तेरे बनाए कानून पूर्ण हैं। तेरे सम्पूर्ण क्रिया-कलापों का पूर्णतया वर्णन नहीं हो सकता। स्पष्ट है कि तेरे कार्यों का कोई मूल्यांकन नहीं हो सकता।

सरबं दाता ॥ सरबं गिआता ॥
सरबं भाने ॥ सरबं माने ॥७६॥

गुरदेव फरमान करते हैं कि हे परमात्मा! तू सब जीवों का दाता है अर्थात सबको दातें बख़्शने वाला दातार पिता है। तू सर्वज्ञ है अर्थात सबके दिलों की जानने वाला अन्तरयामी है। सभी तेरे प्रकाश से प्रकाशित हैं, तू ही सबको रोशनी देने वाला देदीप्यमान सूर्य है। संसार के सब जीव तेरी ही पूजा अर्थात आराधना करते हैं, जैसा कि कलगीधर पातशाह का आदेश है–*'पूजा अकाल की, परचा शब्द का, दीदार खालसे का।'* शब्द के प्रसार हेतु गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रमाण है:

लंगरु चलै गुर सबदि हरि तोटि न आवी खटीऐ ॥ *(पन्ना ९६७)*

वस्तुतः शब्द के प्रचार से ही जीव अकाल पुरख से जुड़ सकता है।

सरबं प्राणं ॥ सरबं त्राणं ॥
सरबं भुगता ॥ सरबं जुगता ॥७७॥

हे प्रभु! तू समस्त जीवों का प्राणधन है। तू ही सबके प्राणों का आधार है। तू ही सब जीवों के लिए ओट है। तू ही समस्त पदार्थों को भोगने वाला है अर्थात तू ही सब पर हकूमत चलाने वाला बादशाह है। तू सब जीवों में रचा-बसा हुआ है अर्थात सब प्राणियों में व्याप्त है।

सरबं देवं ॥ सरबं भेवं ॥
सरबं काले ॥ सरबं पाले ॥७८॥

हे परमात्मा! तू प्रकाश पुञ्ज तथा पूजनीय है। तू समस्त प्राणियों के दिलों के भेद जानने वाला है। तू सब जीवों हेतु काल-स्वरूप अर्थात सबका नाशकर्ता है तथा सबकी पालना करने वाला भी तू आप ही है। गुरदेव ने जापु साहिब में कई स्थानों पर एक साथ उस परमात्मा के 'जमाल' एवं 'जलाल' रूप का सुंदर वर्णन किया है।

रूआल छंद ॥ त्व प्रसादि ॥
आदि रूप अनादि मूरति अजोनि पुरख अपार ॥
सरब मान त्रिमान देव अभेव आदि उदार ॥
सरब पालक सरब घालक सरब को पुनि काल ॥
जत्तर तत्तर बिराजही अवधूत रूप रसाल ॥७९॥

'रूआल' छंद का नाम है। प्रभु-कृपा से गुरु पातशाह इस बंद की रचना कर रहे हैं। कलगीधर पातशाह इस छंद में फरमान करते हैं कि हे मालिक! तेरी हस्ती (वजूद) सबसे पूर्व का है अर्थात सबसे पहले तू ही था। तेरी आरंभता कब हुई, इस विषय में कोई भी तो नहीं जानता। तू जन्म से रहित है भाव तू अन्य जीवों की तरह जन्म नहीं लेता तथा तू सम्पूर्ण सृष्टि में व्याप्त है। तू बेअंत है, तेरा अंत नहीं पाया जा सकता। हे परम पुरख

परमात्मा! संसार के सब प्राणी तेरे ही आगे झुकते हैं। तीनों लोकों के जीव तेरी ही पूजा करते हैं। तू प्रकाश-स्वरूप है। तेरा भेद किसी ने नहीं पाया। तू सबका मूल है तथा उदारचित्त है। तू सखी है अर्थात तू कंजूसी नहीं करता, जैसा कि गुरबाणी में फरमान है:

देदा दे लैदे थकि पाहि ॥
जुगा जुगंतरि खाही खाहि ॥ (पन्ना २)

अर्थात जीव ले-लेकर थक जाते हैं, वह दातार अकाल पुरख सभी जीवों को दातें बख्श रहा है।

आगे गुरदेव फरमान करते हैं कि समस्त जीवों की पालना करने वाला भी वही परमात्मा है। सबका नाश करने वाला अर्थात काल स्वरूप भी तू ही है। तू सर्वत्र में समाया हुआ है। तू सभी रसों का घर है लेकिन तू इन रसों के बंधन से मुक्त है अर्थात माया के बंधनों से रहित है। बाणी में अन्यत्र भी उस परमात्मा को माया के प्रभाव से परे बताया गया है, यथा:

सो पुरखु निरंजनु हरि पुरखु निरंजनु हरि अगमा अगम अपारा ॥
सभि धिआवहि सभि धिआवहि तुधु जी हरि सचे सिरजणहारा ॥
सभि जीअ तुमारे जी तूं जीआ का दातारा ॥ (पन्ना १०)

निरंजन अर्थात् माया के प्रभाव से रहित। इसी तरह उस परमात्मा के नाम को भी माया के प्रभाव से परे बताया गया है जैसा कि जपु जी साहिब में श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है:

ऐसा नामु निरंजनु होइ ॥
जे को मंनि जाणै मनि कोइ ॥ (पन्ना ३)

नाम ठाम न जाति जाकर रूप रंग न रेख ॥
आदि पुरख उदार मूरति अजोनि आदि असेख ॥
देस और न भेस जाकर रूप रेख न राग ॥
जत्र तत्र दिसा विसा हुइ फैलिओ अनुराग ॥८०॥

हे वाहिगुरु! तेरा न कोई विशेष नाम है न कोई विशेष ठिकाना है। न तो तेरी कोई जाति है, न रूप है और न ही कोई विशेष निशान है जिससे तेरी पहचान हो सके। हे परमात्मा! तू सबका मूल है, तू सब में मौजूद है। तेरे स्वरूप में उदारता भरी है। तू जन्मों में नहीं आता। तू आरंभ से ही है। हे मालिक! तेरा कोई विशेष स्वरूप भी नहीं है।

आगे गुरदेव का फरमान है कि हे परमात्मा! तेरा न कोई एक देश है, न कोई विशेष पहरावा ही है। न तेरा कोई रूप है, न रेख है, न ही तुझे कोई मोह के बन्धन में बांध सकता है। हे प्रभु! तू प्रत्येक दिशा (उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम) तथा प्रत्येक कोने में प्रेम-रूप में व्याप्त है अर्थात् प्यार-रूप में फैला हुआ है। तेरे प्यार की सुगन्ध कण-कण में समाई हुई है।

गुरबाणी में अन्यत्र भी इस प्यार की सुगन्ध लेने हेतु तुझे क्या करना चाहिए, यह युक्ति बताते हुए गुरदेव फरमान करते हैं :

जालि मोहु घसि मसु करि मति कागदु करि सारु ॥
भाउ कलम करि चितु लेखारी गुर पुछि लिखु बीचारु ॥
लिखु नामु सालाह लिखु लिखु अंतु न पारवारु ॥
बाबा एहु लेखा लिखि जाणु ॥
जिथै लेखा मंगीऐ तिथै होइ सचा नीसाणु ॥ (पन्ना १६)

अर्थात् माया का मोह जला कर, उसे घिसा कर, स्याही बना कर तथा अपनी अकल को सुंदर कागज बना। प्रेम को कलम तथा अपने मन को लेखक बना। गुरु की शिक्षा लेकर ईश्वर के गुणों को विचार कर लिख। प्रभु का नाम लिख, प्रभु की उस्तुति लिख। उस बेअंत प्रभु के गुणों का अंत नहीं पाया जा

सकता।

उस प्रेम के सागर को पाने हेतु गुरु-दर्शाये मार्ग पर चल कर उस परमात्मा की सिफत-सलाह करते हुए उस मालिक की सारी रचना से नि:स्वार्थ भाव से प्यार करते हुए, उसी का रूप होकर अपना जीवन सार्थक किया जा सकता है क्योंकि गुरदेव का फरमान है कि जिन्होंने प्रेम किया है उन्होंने प्रभु को पाया है।

नाम काम बिहीन पेखत धाम हूं नहि जाहि ॥
सरब मान सरबत्र मान सदैव मानत ताहि ॥
एक मूरति अनेक दरसन कीन रूप अनेक ॥
खेल खेल अखेल खेलन अंत को फिरि एक ॥८१॥

गुरदेव इस बंद में फरमान करते हैं, हे प्रभु! तू ऐसा है जिसका कोई एक नाम नहीं, जिसकी कोई कामना नहीं तथा जिसका कोई विशेष ठिकाना नहीं है। (ऐसे) उस प्रभु को सब सिर झुकाते हैं, प्रत्येक स्थान पर उसी अकाल पुरख की पूजा होती है, सभी जीव उसी को ही मानते हैं, उसी के समक्ष झुकते हैं। वह परमात्मा अकेला है पर अनेकों सूरतों में वही एक दिखाई दे रहा है। इस तरह से अनेकों में विद्यमान उस प्रभु ने अपने अनेक रूप बनाए हुए हैं। कहने से अभिप्राय, प्रत्येक सूरत उसका स्वरूप है।

वह परमात्मा खेल-खेल में जगत की रचना कर देता है और फिर खेल-खेल में ही प्रलय का खेल, खेल कर सारी रचना को नष्ट कर देता है और जब यह लीला खत्म होती है फिर वही एकमात्र परमात्मा ही रह जाता है।

उपरोक्त भाव को 'आसा की वार' में गुरु नानक पातशाह ने भी बड़े सुंदर ढंग से रूपायित किया है, यथा:

आपीन्है आपु साजिओ आपीन्है रचिओ नाउ ॥
दुयी कुदरति साजीऐ करि आसणु डिठो चाउ ॥
दता करता आपि तूं तुसि देवहि करहि पसाउ ॥
तूं जाणोई सभसै दे लैसहि जिंदु कवाउ ॥
करि आसणु डिठो चाउ ॥ (पन्ना ४६३)

भावार्थ—हे प्रभु! तू सारी सृष्टि में स्वयं व्याप्त होकर अपनी रची हुई रचना अर्थात जीवों को बनाना, सौगातें देकर पालना और अंत में हुक्म देकर समाप्त कर देना, का यह खेल तू स्वयं देख रहा है। वह ईश्वर सब कुछ करने में समर्थ है। उस परमात्मा को कोटि बार नमन।

देव भेव न जानही जिह बेद अउर कतेब।
रूप रंग न जाति पाति सु जानई किंह जेब ॥
तात मात न जात जाकर जनम मरन बिहीन।
चक्क्र बक्क्र फिरै चतुर चक्क मानही पुर तीन ॥८२॥

गुरु कलगीधर पातशाह उस परमेश्वर को अनंत-बेअंत कथन करते हुए स्पष्ट करते हैं कि उस अनंत का भेद आज तक कोई धर्म-पुस्तक या उसका रचयिता भी पाने में सक्षम नहीं हो सका। गुरदेव का कथन है कि वह ईश्वर ऐसा है, जिसका भेद न देवते जानते हैं न ही पूर्व प्राप्त धर्म-पुस्तकें उस परमात्मा को मुकम्मल रूप से बयान करने में समर्थ हो सकी हैं।

कोई भी नहीं जानता कि उस ईश्वर का रूप कैसा है? रंग कैसा है? जाति कौन सी है? वंश कैसा है और उसकी नुहार कैसी है। उसकी शोभा अकथनीय है। वह अकाल पुरख ऐसा है जिसका न पिता है, न माता है और न ही कोई जाति है। जो जन्म और मृत्यु से परे है अर्थात् जहां जन्म ही नहीं वहां मृत्यु का सवाल ही नहीं उठता। जिसकी उत्पत्ति है उसी का विनाश सम्भव है जैसा कि नवम पातशाह श्री गुरु तेग बहादर जी का पावन संदेश है:

जो उपजिओ सो बिनसि है परो आजु कै कालि ॥
नानक हरि गुन गाइ ले छाडि सगल जंजाल ॥
(पन्ना १४२९)

यही नहीं हर क्षण जीव की श्वासों की पूंजी खत्म होती जा रही है:

छिनु छिनु अउध बिहातु है फूटै घट जिउ पानी ॥ *(पन्ना ७२६)*

ईश्वर इन सब अवस्थाओं से मुक्त है।

उस वाहिगुरु का काल रूपी भयावह चक्र बहुत ही तेज गति से घूमता हुआ समस्त रचना उस परमात्मा के आगे नतमस्तक है। अत: स्पष्ट है कि सभी जीव तथा समूची प्रकृति उसी के भय में है तथा सर्वत्र उसी का हुक्म जारी है। 'आसा की वार' में श्री गुरु नानक देव जी की पावन बाणी इसी भाव को स्पष्ट करती है:

भै विचि पवणु वहै सदवाउ ॥
भै विचि चलहि लख दरीआउ ॥
भै विचि अगनि कढै वेगारि ॥
भै विचि धरती दबी भारि ॥
भै विचि इंदु फिरै सिर भारि ॥
भै विचि राजा धरम दुआरु ॥
भै विचि सूरजु भै विचि चंदु ॥
कोह करोड़ी चलत न अंतु ॥
भै विचि सिध बुध सुर नाथ ॥
भै विचि आडाणे आकास ॥
भै विचि जोध महाबल सूर ॥
भै विचि आवहि जावहि पूर ॥
सगलिआ भउ लिखिआ सिरि लेखु ॥
नानक निरभउ निरंकारु सचु एकु ॥
(पन्ना ४६४)

उपरोक्त श्लोक में श्री गुरु नानक देव जी ने भी इसी हकीकत को बयान किया है कि सृष्टि में केवल एक ईश्वर ही ऐसी हस्ती है जो किसी के भय अथवा डर में नहीं अन्यथा सृष्टि का प्रत्येक जीव तथा कुदरत की प्रत्येक वस्तु उस परमात्मा के भय में ही है।

निष्कर्षत: तीनों ही लोकों के जीव अर्थात समस्त जीव उस वाहिगुरु के भय में हैं तथा सभी उसी के समक्ष शीश झुकाते हैं।

लोक चउदह के बिखै जग जापही जिंह जाप ॥
आदि देव अनादि मूरति थापिओ सबै जिंह थापि ॥
परम रूप पुनीत मूरति पूरन पुरख अपार ॥
सरब बिस्व रचिओ सुयंभव गड़न भंजनहार ॥८३॥

उपरोक्त बंद में भी कलगीधर पातशाह उसी अकाल पुरख की स्तुति करते हैं। गुरु जी अपने उदगारों को इस प्रकार अभिव्यक्त कर रहे हैं कि वह परमात्मा ऐसा है जिसका जाप चौदह लोकों के जीव कर रहे हैं। पुरातक ग्रंथों के अनुसार लोक १४ हैं जिनसे ७ धरती के ऊपर तथा ७ धरती के नीचे विद्यमान हैं। अत: सभी जीव उसी ईश्वर का ही जाप कर रहे हैं। वह परमात्मा सर्वोच्य हस्ती वाला है, पवित्र स्वरूप वाला है तथा सब में समाया हुआ है। वह अपार है। उसका अंत कोई नहीं पा सकता। वह सम्पूर्ण सृष्टि, समस्त रचना का रचयिता अर्थात सर्वस्व का निर्माता है तथा स्वयं से प्रकट हुआ है। उसे अस्तित्व में लाने वाला और कोई नहीं। स्वयं से प्रकाशवान वह परमात्मा इस जगत को बनाने वाला और पुन: उसे नष्ट कर देने वाला भी आप ही है।

गुरबाणी में अन्यत्र भी प्रमाण हैं कि वह परमात्मा तरह-तरह के शरीरों का निर्माण करता है, जीवों को जगत में भेजता है और फिर स्वयं ही उन्हें वापिस बुला लेता है। श्री गुरु नानक देव जी का फरमान है:

तूं आपे आपि वरतदा आपि बणत बणाई ॥
तुधु बिनु दूजा को नही तू रहिआ समाई ॥
(पन्ना १२९१)

यही नहीं, उसकी रचना भी विचित्र है:

तूं करता पुरखु अगंमु है आपि स्रिसटि उपाती ॥
रंग परंग उपारजना बहु बहु बिधि भाती ॥
(पन्ना १३८)

गुरु-गाथा : १

चमेली का फूल

*-डॉ. अमृत कौर**

डॉ. अमृत कौर द्वारा लिखित गुरु इतिहास/सिख इतिहास से संबंधित कालम 'विस्मादी वृत्तांत' सम्पूर्ण हो चुका है जिसे 'गुरमति ज्ञान' के पाठकों द्वारा बहुत अच्छा प्रतिउत्तर मिला है। गुरु-इतिहास का एक महान स्रोत गुरु-साखियां अथवा साखी साहित्य भी है। इस महान तथा विशाल स्रोत में से कुछ चुनिंदा साखियां उक्त लेखिका की कलम से लिखित 'गुरमति ज्ञान' के पाठकों के लिए 'गुरु-गाथा' कालम के विशेष उपहार के रूप में प्रस्तुत करने की खुशी ले रहे हैं। —संपादक

एक बार श्री गुरु नानक देव जी धर्म का प्रचार करते-करते मुलतान पहुंचे। मुलतान पहले से ही संतों, पीरों, फकीरों से भरा पड़ा था। उन्होंने गुरु जी की महिमा और यश के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था। उन्होंने सोचा कि गुरु जी के यहां आ जाने से उनके अस्तित्व को खतरा पैदा हो जाएगा। उन्होंने दूध का लबालब भरा हुआ एक कटोरा लिया और गुरु जी के सम्मुख रख दिया। सांकेतिक रूप से उनके कहने का अभिप्राय यह था कि जैसे इस दूध के भरे हुए कटोरे में और दूध समाने का स्थान नहीं है ऐसे ही मुलतान शहर जो पहले ही संतों, पीरों, फकीरों से भरा हुआ है, इसमें आपके लिए कोई स्थान नहीं है। गुरु जी उनका अभिप्राय जान कर मुस्करा दिए। उन्होंने एक चमेली का फूल दूध के भरे कटोरे पर रख दिया। फूल मजे से दूध के कटोरे पर तैरने और लहराने लगा। गुरु जी से उन्होंने उनके इस नाटकीय उत्तर को स्पष्ट करने के लिए प्रार्थना की। गुरु जी ने उत्तर दिया, "आप लोग मुझे बताने आए थे कि जिस तरह इस दूध के भरे हुए कटोरे में और दूध समाने के लिए स्थान नहीं है, भाव यहां अब किसी और के लिए कोई स्थान नहीं है। आप चिंता न करें। हम यहां परमात्मा की आज्ञानुसार जितना भी समय रहेंगे दूध पर तैर रहे इस फूल की भांति ही रहेंगे। उन लोगों ने क्षमापूर्वक कहा, "गुरु जी! कृप्या कर हमारा मार्ग-निर्देशन कीजिए।" गुरु जी ने उत्तर दिया, "फूल अपने जीवन-स्रोत सूर्य से साक्षात् संबंध स्थापित कर उससे शक्ति, सुंदरता और प्रकाश ग्रहण करता है। उसी से अपने जीवन को विकसित और प्रफुल्लित करता है। वह इन सद्‌गुणों के भंडार को अपने तक सीमित न रख कर निष्काम भाव से सुगन्धित और सुंदर बना देता है। फूल, सुंदर बनने का प्रतीक है, जीवन के सम्पूर्ण विकास का प्रतीक है, निष्काम सेवा का प्रतीक है, जीवन को सौन्दर्य प्रदान करने का प्रतीक है। ऐसे ही फूल की तरह अपने जीवन में सद्‌गुणों का विकास कर उसे विकसित और प्रफुल्लित बनाना होता है। गुरमुख व्यक्ति केवल अपने लिए ही नहीं जीता अपितु निष्काम भावना की सेवा से औरों के जीवन को भी सुखमय और सुंदर बनाने में सहायक सिद्ध होता है।"

गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥
जे गुण होवन्हि साजना मिलि साझ करीजै ॥
साझ करीजै गुणह केरी छोडि अवगण चलीऐ ॥ . .
जिथै जाइ बहीऐ भला कहीऐ झोलि अंम्रितु पीजै ॥
गुणा का होवै वासुला कढि वासु लईजै ॥

(पन्ना ७६५-६६)

**१५४, ट्रिब्यून कॉलोनी, बलटाना, ज़ीरकपुर-१४०५०३*

दशमेश पिता के ५२ दरबारी कवि-११

विद्वान एवं भावुक कवि : कवि मंगल

*-डॉ. राजेंद्र सिंघ**

दशमेश पिता साहिब श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी के दरबारी कवियों में मंगल कवि का नाम बहुत महत्वपूर्ण है। कवि मंगल संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पंडित थे। दशमेश पिता ने जब संस्कृत साहित्य को लोक-भाषा पंजाबी में अनुवाद करवा कर आम जनता तक पहुंचाने का निर्णय लिया तो संपूर्ण उत्तर-पश्चिम भारत से संस्कृत के विद्वान गुणी कवियों को यह अनुवाद-कार्य करने के लिए अनंदपुर साहिब आमंत्रित किया गया। कवि मंगल इन आमंत्रित विद्वान कवियों में से एक थे।

कवि मंगल पंजाब राज्य के जिला सियालकोट के एक गांव 'पसरूर' के रहने वाले थे। गुरु साहिब ने आपको 'महाभारत' को अनुवाद करने का कार्य सौंपा। आपने 'महाभारत' के शल्य-पर्व का अनुवाद किया। इस संदर्भ में कवि मंगल स्वयं आत्म-साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए कहते हैं:

गुरु गोबिंद मन हरख हवै, मंगल लियो बुलाय,
शल्य परब आज्ञा करी, लीजै तुरत बनाय।
संबत सत्रह सै बरख, त्रेपन बीतनहार।
माधव रितु तिथि त्रौदसी, तां दिन मंगलवार।
शल्य परब भाषा भयो, गुरु गोबिंद के राज।
अरब खरब बहु दरब दै, करि कविजन को काज।
जौलौ धरनि अकास गिरि, चंद सूर सुर इंद।
तौलौ चिरजीवै जगत, साहिब गुरु गोबिंद।

कवि मंगल के अनुसार श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी ने मुझे बुला कर 'शल्य-पर्व' का अनुवाद करने की आज्ञा दी। कवि के अनुसार यह दिन माधव ऋतु अर्थात् बसंत ऋतु की तेरहवीं तिथि थी और मंगलवार था। संवत् १७५३ यानी सन् १६९६ ई था। कवि मंगल कहते हैं कि गुरु साहिब ने इस कार्य के लिए अन्य कवियों की ही भांति मुझे भी बहुत धन-धान्य और द्रव्य दिया। फिर कवि मंगल दशमेश पिता की प्रशंसा करते हुए कहते हैं कि जब तक धरती, आकाश, पर्वत, चंद्र, सूर्य आदि रहेंगे तब तक श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की ख्याति जगत में फैली रहेगी।

कवि मंगल संस्कृत के महापंडित तो थे ही, साथ ही ब्रज भाषा पर भी असाधारण अधिकार रखते थे। उपर्युक्त दोहे उनकी ब्रज भाषा में महारत को दर्शाते हैं। इसके अतिरिक्त आप पंजाबी भाषा के भी सिद्धहस्त कवि थे। उदाहरण के लिए निम्नलिखित कबित्त देखें, जिसमें श्री गुरु गोबिंद सिंघ जी की स्तुति की गई है:

आनंद दा वाजा, नित वजदा अनंदपुर,
सुण सुण सुध, भुलदी ए नर नाह दी।
भौ भिआ भभीखणे नूं, लंकागढ़ वस्सणे दा,
फेर असवारी आवंदी ए महाबाह दी।
बल छड्ड बलि जाए, छपिआ पताल विच,
फते दी निशानी जैंदे, द्वार दरगाह दी।
सवणे ना देंदी सुख, दुज्जनां नूं रात दिन,
नौबत गोबिंद सिंघ गुरू पातशाह दी।

इस प्रकार भाषा, बिम्ब, प्रतीक एवं अलंकार आदि के प्रयोग से स्पष्ट होता है कि कवि मंगल

**१/३३८, 'स्वप्नलोक', दशमेश नगर, मंडी मुल्लांपुर दाखा, लुधियाना (पंजाब)*

कितनी उच्च श्रेणी के कवि थे।

मंगल कवि के जीवन की एक और घटना से भी आपके उच्च कोटि के कवि होने का प्रमाण मिलता है। जब आप अपनी बेटी का विवाह करने लगे तो आपने माता जीतो जी को कविता में एक चिट्ठी लिखी। इसमें आपने बेटी के विवाह में जाने के लिए माता जी से छुट्टी मांगी। छुट्टी के साथ-साथ आपने आशीर्वाद भी मांगा कि बेटी का विवाह सुख से सम्पन्न हो जाये और मैं वापस आकर हाजिर हो सकूं। माता जीतो जी कवि मंगल के इस काव्यात्मक संवाद से अत्यंत प्रसन्न हुए और आशीर्वाद दिया।

कवि मंगल ने 'महाभारत' के शल्य-पर्व का अनुवाद करने में जहां एक ओर अपनी विद्वता प्रदर्शित की वहीं दूसरी ओर ब्रज एवं पंजाबी भाषा में कबित्त सवय्ये रचकर अपने भक्ति-विह्वल भावुक हृदय के दर्शन भी करवाये। आपके काव्य में प्रेम, मानवता के हित एवं गुरमति सिद्धांतों की अभिव्यक्ति हुई है।

कविता

शराब पीना छोड़ो आप!

राम लाल जी बैंक में करते थे नौकरी,
बिगड़ गये कुसंग में , पीने-पिलाने लगे,
शराब में धुत रहने लगे दिन-रात ।
न अपनी चिन्ता, न परिवार की फिक्र,
बच्चे-पत्नी सब सहम कर रह जाते।
जब रात को राम लाल जी पीकर आते।
करके व्यर्थ बक-बक हवा को गाली देते।
परिवार की चिन्ता नहीं की राम लाल ने।
बच्चों की समय पर फीस न दी जाती,
न बीमार बच्चों की दवा हो पाती,
फिर भी परिवार ने उन्हें खूब निभाया।
और अब समय ने पलटा खाया।
राम लाल बीमार पड़े तो फिर उठ न सके,
दवा कराते-कराते सब बर्बाद हो गया।
राम लाल का स्वास्थ्य चला गया।
एक दिन यमदूत असमय उन्हें लेने आ गये।
घर में कोहराम मच गया, मुहल्ले में खबर फैल गयी
कि पियक्कड़ राम लाल चले गये।
घर में कुछ भी न था,
लोगों ने चंदा इकट्ठा किया, कफन लाये,
तब राम लाल की लगी लाश ठिकाने।
खूब पीये जीवन भर,
जब मरे तो 'चंदा' में जले।
धन्नू दद्दा, शमशान में बोले--
नशा नाश की जड़ है भाई!
इसका फल अतिशय दुखदाई।
देखो, पीने-पिलाने में रामलाल जी चले गये।
आओ प्रण लें, आज से शराब नहीं पियेंगे।
और देखो, नन्नू का लड़का पिये गाड़ी चला रहा था,
मारा गया, दुर्घटना में
लखन भी अधमरा हो गया साथ में।
राम लाल की दुर्गति देख युवक सहम गये।
सबने लिया संकल्प शराब छोड़ने का।
सात मौतें हुई थीं, गांव में जल्दी-जल्दी
भयभीत थे, सभी पियक्कड़
छोड़ दी सब ने शराब।
गांव सुंदर धरा पर स्वर्ग बन गया।
लड़ते-झगड़ते थे, जो रात में
वे अब करने लगे सतसंग।
धार्मिक ग्रंथों का लगे करने पाठ।
काश! सारे गांव शराब-मुक्त हो जायें तो,
पूरा देश हो जाए शुशहाल।
घरों में बरते शांति सुख, अनचाहा न होए दुख।

*-श्री सुरेन्द्र कुमार अग्रवाल, **C/o** अग्रवाल न्यूज एजेन्सी, हटा, दमोह (म. प्र.)*

ख़बरनामा

ऐतिहासिक गुरुद्वारा साहिब के नजदीक मस्जिद बनाए जाने के कारण पैदा हुई खींचतान को दूर करने के लिए भारत सरकार दखल दे

अमृतसर : (२९ मई) शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने पड़ोसी देश पाकिस्तान के शहर लाहौर के नौ-लक्खा बाजार में स्थित ऐतिहासिक गुरुद्वारा "शहीद सिंघ-सिंघनियां" के नजदीक मुसलमान भाईचारे से सम्बंधित किसी व्यक्ति द्वारा मस्जिद बनाए जाने पर दोनों समुदायों के लोगों में पैदा हुई खींचतान के सम्बंध में छपी खबरों पर चिंता प्रकट करते हुए भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ को अपील की है कि पड़ोसी देश पाकिस्तान में बसते अल्पसंख्यक सिखों की जानमाल की रक्षा तथा सिखों के धार्मिक स्थानों के सम्मान को बनाए रखने के लिए पाकिस्तान सरकार को कहा जाए। जत्थेदार अवतार सिंघ ने कहा कि दोनों धर्मों के धार्मिक स्थानों की अपनी-अपनी महत्ता है, परंतु पाकिस्तान के प्रमुख शहर लाहौर के नौ-लक्खा बाजार में स्थित ऐतिहासिक गुरुद्वारा "शहीद सिंघ-सिंघनियां" सिख धर्म के साथ हुए जुल्म की ऐतिहासिक दास्तां समोए बैठा है। इस पावन स्थान का सम्बंध सिख जगत की धार्मिक भावनाओं के साथ बड़े निकट से जुड़ा हुआ है, जिसकी ऐतिहासिक महत्ता का सिख जगत द्वारा रोजाना सुबह-शाम की जाती अरदास में भी जिक्र आता है। उन्होंने पाकिस्तान में अल्पसंख्यक सिखों के धार्मिक स्थानों की सुरक्षा तथा दोनों समुदायों में किसी प्रकार के तनाव या कड़वाहट को रोकने के लिए तुरंत डिप्लोमेटिक चेनलों द्वारा कार्यवाही किए जाने के लिए भारत के प्रधानमंत्री डॉ. मनमोहन सिंघ को अपील की है कि वे ऐसे समय में अपनी जिम्मेदारी का एहसास करते हुए दोनों समुदायों में पैदा हुए तनाव को दूर करने के लिए उचित भूमिका निभाएं।

कोई भी धर्म नफरत की वकालत नहीं करता : जत्थेदार अवतार सिंघ

अमृतसर :(३ जून) दुनिया भ्रम-भुलेखे, कड़वाहट तथा आपसी झगड़ों में जकड़ी हुई है। शक और अविश्वास का माहौल गर्म है। जब हम अपने भविष्य की ओर नजर मारते हैं तो ऐसा लगता है कि यदि मनुष्य जाति ने महान गुरुओं, पैगंबरों, पीरों, संतों तथा फकीरों द्वारा दर्शाए सच्चाई के मार्ग पर चलते हुए मानवीय भाईचारे को मजबूत न किया तो इस दुनिया पर कोई बड़ी मुसीबत आ जाएगी। इन विचारों का प्रकटावा गत दिनों दिल्ली में जामा मस्जिद यूनाइटेड फोरम, दिल्ली द्वारा "आतंकवाद के रोग से मानवता को छुटकारा कैसे मिले?" विषय पर आयोजित राष्ट्रीय कानफ्रंस को सम्बोधित करते हुए शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने किया। उन्होंने कहा कि हम ऐसे नाजुक समय में से गुजर रहे हैं जिसमें राजनैतिक विचारधारा तथा राजनैतिक स्वार्थों की के लिए कशमकश

खतरनाक हद तक जोर पकड़ गई है। शक्तिशाली देश दिन-रात इतने भयंकर हथियार बनाने में लगे हुए हैं कि यदि बदकिस्मती से वे चल जाएं तो तीन-चौथाई दुनिया का सफाया कर दें। लोगों में भी ऐसे देशों के प्रति ही इज्जत वाला रवैया पाया जाता है। बड़े देशों द्वारा छोटे देशों को हड़प जाने तथा कई देशों में उनके भीतर निवास करते छोटे धार्मिक ग्रुपों को अपने में मिला लेने के यत्नों के लिए हजारों डालर खर्चे किए जा रहे हैं। देश के राजनैतिक पैगंबरों द्वारा आपसी लड़ाई, अविश्वास, धर्म के नाम पर कत्लेआम वाला माहौल पैदा किया हुआ है। ऐसे हालातों ने आतंकवाद और दहशतगर्दी को जन्म दिया जिसका धर्म जैसी पवित्र चीज से दूर तक का भी सम्बंध नहीं।

उन्होंने कहा कि जबकि दुनिया का कोई भी धर्म आपसी द्वेष या मारधाड़ का संदेश नहीं देता तो दहशतगर्दी को किसी एक धर्म के साथ जोड़ना उचित नहीं। इस्लाम, जिसकी विचारधारा में से अनेक संत-फकीर आदि पैदा हुए हैं, के शांतमयी अक्स को बिगाड़ने की कुछ जेहादियों द्वारा शरारत की जा रही है। दुनिया में परमात्मा के भय तथा सत्य पर चलने वाला कोई भी मनुष्य आतंकवादी या दहशतगर्द नहीं हो सकता। कुछ सिरफिरे लोगों द्वारा मनमर्जी करके किसी धर्म के समूचे लोगों को उन अनैतिक कार्यवाहियों के साथ जोड़ना कहां की सियानप है?

उन्होंने कहा कि जब तक दुनिया में धर्म के उसूलों का बोलबाला नहीं होता तब तक दहशतगर्दी जैसे दैंत्य को मारना असंभव होगा। इसलिए दुनिया के धार्मिक नेता आगे बढें और अपने फर्जों की पालना करते हुए धर्म का बोलबाला कायम करें। इस अवसर पर उन्होंने जामा मस्जिद यूनाइटेड फोरम का ऐसे सकारात्मक कदम का धन्यवाद किया।

पत्रिका का प्रकाशक सिख जगत से माफी मांगे

अमृतसर :(३ जून) शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के अध्यक्ष जत्थेदार अवतार सिंघ ने यू. एस. ए. से छपती पत्रिका 'गोल्फ डाईजेस्ट' द्वारा पंचम पातशाह श्री गुरु अरजन देव जी की तस्वीर के साथ छेड़छाड़ करके छापने सम्बंधी अखबारों में छपी खबरों का सख्त नोटिस लेते हुए इसे बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण तथा सिखों की भावनाओं के साथ खिलवाड़ करार दिया है। उन्होंने कहा कि सिख किसी दूसरे धर्म में हस्तक्षेप नहीं करता और न ही किसी दूसरे द्वारा किए जाते हस्तक्षेप को बर्दाश्त करता है। उन्होंने कहा कि गुरु साहिबान की तस्वीरें सिख जगत के लिए सम्मानीय हैं। उक्त पत्रिका का प्रकाशक सिख जगत से बिना शर्त माफी मांगे। उन्होंने कहा कि दिल्ली स्थित अमेरिका दूतावास तथा भारत के प्रधानमंत्री को भी इस सम्बंध में अपील की गई है कि वे 'गोल्फ डाईजेस्ट' पत्रिका के प्रकाशक की ऐसी कार्यवाही के कारण सिख जगत में पैदा हुए रोष तथा सिखों की भावनाओं को सम्बंधित सरकार के पास पहुंचाए।

प्रिंटर व पब्लिशर स. दलमेघ सिंघ ने गोल्डन आफसेट प्रेस, गुरुद्वारा रामसर साहिब, अमृतसर से छपवा कर मालिक शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी के लिए कार्यालय, शिरोमणि गुरुद्वारा प्रबंधक कमेटी, अमृतसर से प्रकाशित किया।संपादक स. सिमरजीत सिंघ। प्रकाशित करने की तिथि : ०१-०७-२००८